शोधादर्श

87

अहिंसा

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

पेंशनर्स शिरोमणि सम्मान

डॉ. शशि कान्त जैन का स्वागत
श्री प्रमोद कुमार शर्मा, अध्यक्ष, एसोसिएशन, द्वारा

डॉ. जैन को स्मृति–चिन्ह
श्री अतुल कुमार गुप्ता, पूर्व मुख्य सचिव तथा
श्री महेश कुमार गुप्ता, अपर मुख्य सचिव, उ.प्र., द्वारा

आद्य सम्पादक : (स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक : (स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
पूर्व सम्पादक : (स्व.) श्री रमा कान्त जैन
मार्गदर्शक : डॉ. शशि कान्त
सम्पादक : श्री नलिन कान्त जैन
सह–सम्पादक : श्री सन्दीप कान्त जैन
: श्री अंशु जैन 'अमर'
: सौ. डॉ. अलका अग्रवाल

प्रकाशक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–226004,

ई–मेल : shodhadarsh@gmail.com मो. 9236062715

णाणं णरस्स सारं – सच्चं जोयम्मि सारभूयं
ज्ञान ही मनुष्य जीवन का सार है
सत्य ही लोक में सारभूत तत्त्व है

शोधादर्श–87

वीर निर्वाण संवत् 2545 जुलाई–दिसम्बर 2018 ई.

विषय क्रम

			पृ.
1	सम्पादकीय	श्री नलिन कान्त जैन	3–4
2	पं. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य	श्री रमा कान्त जैन	5–9
3	चमत्कार की जय–जयकार	श्री अजित प्रसाद जैन	10–11
4	मुद्रण विधा और जैन साहित्य	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	12–19
5	ब्राह्मण–श्रमण संवाद	डॉ. शशि कान्त	20–23
6	जैन समाज की वर्तमान स्थिति और हमारा कर्तव्य	डॉ. अनिल कुमार जैन	24–27
7	जैन धर्म व जैन समाज की छवि	वैद्य राजेश चन्द्र जैन	28–29
8	पाठ्य पुस्तकों में सुधार	डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	30–34
	(टिप्पणी	डॉ. शशि कान्त)	34
9	मानवीय करुणा महल के स्थायी स्तम्भ	श्री अजित जैन 'जलज'	35–36
10	क्षमावाणी पर्व	डॉ. सुनील जैन 'संचय'	37
11	जैन अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद	डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु'	38–43

12	नैनागिरि तीर्थ : महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य	श्री सुरेश जैन	44–48
13	पर्यावरण के बनें प्रहरी (पद्य)	श्री राजीव कान्त जैन	49
14	अच्छा कर (पद्य)	श्री अमरनाथ	50
15	माता का गुणगान (पद्य)	श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'	51
16	क्रान्तिकारी संत (पद्य)	श्री आदिकुमार भ. बंड	52
17	तुम मानवता के अग्रदूत (पद्य)	श्री दुलीचन्द जैन	53
18	श्रीमती विमला देवी जैन नाहर की दीक्षा (पद्य)	श्री लूणकरण नाहर जैन	54
19	स्वास्थ्य सम्बन्धी सुझाव	श्री कैलाश नारायण टण्डन	55–58
20	साहित्य सत्कार पं. पन्नालाल जैन : अभिनन्दन दीपिका; ज्ञान दिवाकर स्मृति ग्रन्थ; ज्ञान सरोवर; मंगलम् पुष्पदंताद्यो; पद्मनन्दिपंचविंशतिका; अज्ञानतिमिरभास्कर; With The Ferry Man; जैन धर्म को जानें	डॉ. शशि कान्त	59–63
21	समीक्षा : शोधादर्श 85 व 86	डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	64–69
22	अभिनन्दन		70
23	शोक संवेदन		71
24	समाचार विविधा		71–72
25	डॉ. शशि कान्त जैन को 'पेंशनर्स शिरोमणि सम्मान'	श्री वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	73–76
26	पाठकों के पत्र श्री अजित जैन 'जलज', डॉ. परमानन्द जड़िया श्री बी.डी. अग्रवाल, डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' वैद्य राजेश चन्द्र जैन, सौ. रंजना बंसल श्री सुरेश जैन		77–80

चित्र

कवर पृ. 1	जैन प्रतीक चिन्ह : तीन लोक–ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। ऊर्ध्वलोक में शीर्ष पर अर्धचन्द्राकार सिद्धशिला है; सम्यक्‌दर्शन–ज्ञान–चारित्र मोक्षमार्ग के साधन–रूपी 3 बिन्दु हैं; स्वस्तिक शुभकारी है। सभी जीव परस्पर अनुग्रह से जुड़े हुए हैं, जिसका आधार अहिंसा है।
कवर पृ. 2–3	'पेंशनर्स शिरोमणि' सम्मान से सम्बन्धित दो–दो चित्र
कवर पृ. 4	आवश्यक सूचना

✧✧✧

सम्पादकीय

शोधादर्श को हमारे बाबा जी कीर्तिशेष डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने फरवरी 1986 में प्रारम्भ किया था। यह इस बात को दृष्टिगत रखते हुए किया गया था कि जैन समाज में कोई शोध पत्रिका नहीं थी। विगत 33 वर्षों में इसके 87 अंकों में जैन धर्म, संस्कृति, इतिहास, साहित्य और कला के सम्बन्ध में विविध शोधपूर्ण लेख प्रकाशित होते रहे हैं। साथ ही, समाज को चेताने वाले लेख भी इसमें विशेष रूप से प्रकाशित किये जाते हैं। साहित्य सत्कार के अन्तर्गत जो पुस्तकें समीक्षार्थ प्राप्त होती हैं उनका सयुक्तिक परिचय दिया जाता है। हमारे छोटे बाबा जी श्री अजित प्रसाद जैन और चाचा जी श्री रमा कान्त जैन ने समाज चेतना का एक आयाम विशेष रूप से प्रस्तुत किया। हमारा प्रयास यह रहता है कि उन महानुभावों द्वारा डाली गई नींव को हम अभिसिंचित करते रहें।

प्रस्तुत अंक 87 में उक्त तीनों महानुभावों के ज्ञानवर्द्धक और विचारोत्तेजक लेख संकलित हैं। डॉ. अनिल कुमार जैन और वैद्य राजेश चन्द्र जैन ने समाज को चेताने वाले लेख दिये हैं। करुणा और क्षमा पर श्री अजित जैन 'जलज' और डॉ. सुनील जैन 'संचय' के विचार दिये जा रहे हैं। अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद के सम्बन्ध में डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' का लेख और नैनागिरि के सम्बन्ध में श्री सुरेश जैन का लेख जिज्ञासुओं के लिए सामग्री प्रस्तुत करते हैं। पद्य रचनाओं के लिए श्री राजीव कान्त जैन, श्री दुलीचन्द जैन, श्री अमरनाथ, श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध', श्री आदिकुमार भगवन्तराव बंड और श्री लूण करण नाहर जैन के प्रति हम आभारी हैं। डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल ने अपने लेख के अतिरिक्त **शोधादर्श** के अंक 85 व 86 की भावपूर्ण समीक्षा भी की है। श्री कैलाश नारायण टण्डन ने अपने 90वें वर्ष में अपने अनुभव के आधार पर स्वास्थ्य सम्बन्धी मार्गदर्शन किया है। पाठकीय प्रतिक्रियाओं के रूप में श्री बी.डी. अग्रवाल, डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', श्री अजित जैन 'जलज', डॉ.

परमानन्द जड़िया, वैद्य राजेश चन्द्र जैन, श्री सुरेश जैन और सौ. रंजना बंसल के उत्साहवर्धक विचार प्राप्त हुए हैं। इन सभी महानुभावों के प्रति अपना सहयोग प्रदान करने के लिए हम आभारी हैं।

हमें इस स्थिति से थोड़ा अवसाद होता है कि हमारी समाज का प्रबुद्ध वर्ग सयुक्तिक लेखन में अपेक्षित रुचि नहीं लेता है और जो विचारणीय बिन्दु, उठाये जाते हैं उन पर प्रायः मौन रहता है, जैसे कि श्री अमित शाह की जुमलेबाजी कि वह जैन नहीं 6 पुश्त से हिन्दु हैं। इस प्रकार की पत्रिका की आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए पिता जी के मार्गदर्शन में हम इसको प्रवाहमान रखेंगे। यहां मैं उल्लेख करना चाहूंगा कि पिता जी को गत 22 नवम्बर को **पेंशनर्स शिरोमणि** सम्मान से सम्मानित किया गया है जो एक वरिष्ठ नागरिक के लिए विशिष्ट उपलब्धि है। पिता जी उत्तर प्रदेश शासन में विशेष सचिव के पद से 30 जून, 1990, को सेवा–निवृत्त हुए थे।

हमारा अपने सभी पाठकों से, लेखकों से और विचारकों से सविनय निवेदन है कि वे अपने विचार और रचनाएं हमें उपलब्ध कराते रहें। जो सहयोग उनसे प्राप्त हुआ है उसके लिए हम उनके आभारी हैं।

नलिन कान्त जैन
सम्पादक

31–12–2018

✧✧✧

पं. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य

– श्री रमा कान्त जैन

जीवनवृत्त

5 मार्च, 1911 ई., को मध्य प्रदेश के सागर जिले में पारग्राम (पारगुवां गांव) में जन्में और 9 मार्च, 2001 ई., को श्रीक्षेत्र कुण्डलपुर (जिला दमोह, म.प्र.), में दिवंगत हुए पं. पन्नालाल जी ने 90 वर्ष का जीवन जिया था। उनके पिता जी का नाम गल्लीलाल और माता जी का जानकीबाई था। आठ वर्ष की वय में महामारी के कारण पिता जी का साया उनके सिर से उठ गया। अतः उनके पालन–पोषण का पूर्ण दायित्व उनकी माता जी पर आ पड़ा। वह उन्हें लेकर सागर अपने भाई के घर आ गई। यह सन् 1919 ई. की बात है। सागर में ही उनकी स्कूली शिक्षा प्रारम्भ हुई। बालक पन्नालाल दिन में स्कूल पढ़ने जाते थे और रात्रि में गौराबाई जैन मन्दिर में लगने वाली पाठशाला में बालबोध और पूजा–पाठ पढ़ते थे। उस मन्दिर की छत पर गणेश प्रसाद वर्णी जी शास्त्र–प्रवचन करते थे। शास्त्र–प्रवचन के पश्चात जब वर्णी जी नीचे पाठशाला में आते तब बच्चों से प्रश्न पूछा करते थे। चूंकि बालक पन्नालाल उनके प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दे देता था, उसकी मेधा से प्रभावित वर्णी जी के मन में उसे आगे पढ़ाते रहने की इच्छा बलवती होती गई। जब पन्नालाल हिन्दी की चौथी कक्षा उत्तीर्ण कर चुके तब वर्णी जी ने उन्हें अपनी सत्तर्क सुधातरंगिणी दिगम्बर जैन पाठशाला में भर्ती कर लिया। चूंकि बालक पन्नालाल में फीस देने का सामर्थ्य नहीं था, वर्णी जी ने उनकी निःशुल्क व्यवस्था करायी। पहले साल **अमरकोष, अष्टाध्यायी** के सूत्र और **रत्नकरण्डश्रावकाचार** का अध्ययन हुआ। तीसरे वर्ष उन्होंने वाराणसी की प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण की। तदनन्तर उन्हें व्याकरण ग्रन्थ **सिद्धांतकौमुदी** और धर्मशास्त्र **सर्वार्थसिद्धि** का अध्ययन कराया गया। व्याकरण मध्यमा परीक्षा के चार खण्ड तथा 'काव्यतीर्थ' की परीक्षा उत्तीर्ण करने के अनन्तर एक वर्ष के भीतर वर्णी जी ने उन्हें समस्त जैन साहित्य, **प्रमेयकमलमार्तण्ड** तथा **अष्टसहस्री** पढ़वा दी और इस प्रकार 20 वर्ष की अवस्था पहुंचते–पहुंचते पूर्ण पण्डित बना दिया।

वर्णी जी यहीं नहीं रुके। सन् 1931 ई. में उक्त पढ़ाई पूर्ण कर जब पं. पन्नालाल जी अध्यापकी हेतु अधिक वेतन पर उदयपुर जाने लगे तब वर्णी जी ने उन्हें रोक लिया और अपने विद्यालय में ही 25 रुपये मासिक पर साहित्याध्यापक रख लिया। अपने जीवन को गढ़ने–संवारने वाले वर्णी जी के प्रति पं. पन्नालाल जी इतने श्रद्धावनत रहे कि उनके आदेश को शिरोधार्य कर जीवन के 52 बसन्त श्री गणेश संस्कृत महाविद्यालय, मोराजी, सागर, में ही साहित्याध्यापक और प्राचार्य के रूप में बिता दिये। सन् 1986 ई. में आ. विद्यासागर महाराज के अनुरोध पर श्री गणेश प्रसाद वर्णी गुरुकुल, पिसनहारी मढ़िया, जबलपुर, का पुनरुद्धार कर शेष जीवन वहीं अधिष्ठाता के रूप में शिक्षादान में लगा दिया।

अध्यापन के साथ–साथ उन्होंने अपना अध्ययन भी जारी रखा और सन् 1936 ई. में वाराणसी से 'साहित्याचार्य' परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् 1973 ई. में सागर विश्वविद्यालय ने उन्हें उनके शोध–प्रबन्ध 'महाकवि हरीचंद : एक अनुशीलन' पर पी–एच.डी. उपाधि प्रदान की। उक्त शोध–प्रबन्ध सन् 1975 ई. में 'भारतीय ज्ञानपीठ' से प्रकाशित हुआ है।

व्याकरण एवं साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान पं. पन्नालाल जी ने अपने जीवन का बहुभाग लगभग तीन पीढ़ियों तक के अपने शिष्यों को संस्कृत व्याकरण और साहित्य पढ़ाने में बिता दिया। अपने शिष्यों के साथ उनका व्यवहार बड़ा स्नेहपूर्ण रहता था। अध्यापन कला अद्भुत थी। बड़ी तन्मयता से वह अध्यापन करते थे। जरूरतमंद विद्यार्थियों की सहायता के लिये वह सदैव तत्पर रहते थे। न केवल अपने विद्यालय और गुरुकुल के छात्रों को अपितु जो कोई भी उनके पास अध्ययन की इच्छा से आ जाता था उसे ज्ञानदान देने में वह कोई संकोच नहीं करते थे। आज के अनेक विद्वानों को ही नहीं, अपितु अनगिनत मुनि, आर्यिका, ब्रह्मचारियों को भी उनके शिष्य होने का सौभाग्य प्राप्त रहा। उनके अनेक शिष्यों ने अपने संस्मरणों में उनके गुणों का जो वर्णन किया है उससे विदित होता है कि वह समय की पाबंदी, कर्तव्यनिष्ठा, अनिन्दा व्रत, क्षमा, धैर्य आदि अलौकिक गुणों के धनी थे। उनका जीवन सन्तोष की अद्वितीय मिसाल था। राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त होने के अनन्तर जब अधिक वेतन पर विश्वविद्यालय में सेवा करने का अवसर सुलभ हुआ तब वर्णी जी के वचनों को ध्यान में रखकर मोराजी सागर में ही अल्पवेतन पर अध्यापन कार्य करते रहना उचित समझा।

रचनाधर्मिता

आदर्श शिक्षक व कुशल वक्ता पं. पन्नालाल जी लेखनी के भी धनी रहे। रचनाधर्मिता उनमें छात्रावस्था से ही प्रस्फुटित होने लगी थी। सन् 1925 ई. में जब वह व्याकरण–मध्यमा के प्रथम खण्ड के छात्र थे उन्होंने दशलक्षण पर्व में उत्तमक्षमादि गुणों का वर्णन करने वाले कुछ पद्य संस्कृत में बनाये थे जिनकी वर्णी जी ने भूरि–भूरि प्रशंसा की थी। उससे उत्साहित हो कर वह संस्कृत में काव्य रचना करने लगे और उनकी काव्य–कला दिनोदिन निखरती चली गई। उन्होंने अपना कवि उपनाम 'वसन्त' रखा। संस्कृत में सभी विधा के छन्दों में रचना करने में वह पटु थे। सरस्वती का वरद हस्त उन्हें प्राप्त था।

'भारतीय ज्ञानपीठ' से प्रकाशित प्राचीन कृतियां – जिनसेनकृत **आदिपुराण** (1–2), गुणभद्र रचित **उत्तरपुराण**, रविषेण के **पद्मपुराण** (1 से 3), जिनसेनसूरि पुन्नाट के **हरिवंशपुराण**, वादीभसिंह की **गद्यचिन्तामणि**, अर्हदास के **पुरुदेवचम्पू**, हरिचन्द्र के **जीवन्धरचम्पू** और **धर्मशर्माभ्युदय**, तथा वट्टकेर कृत **मूलाचार** (1–2) साहित्याचार्य जी द्वारा किये गये सरल हिन्दी अनुवाद, सम्पादन और विशद प्रस्तावना से मण्डित हैं। **गद्यचिन्तामणि**, **पुरुदेवचम्पू** और **जीवन्धरचम्पू** पर संस्कृत मे भी टीका रचीं।

'वीर सेवा मंदिर ट्रस्ट' से उनकी कृतियां – **सम्यक्त्वचिंतामणि**, **सज्ज्ञानचन्द्रिका** और **सम्यक्चारित्र चिंतामणि** प्रकाशित हुई। उनके द्वारा सम्पादित अन्य उल्लेखनीय कृतियां हैं – स्वामी समन्तभद्र कृत **स्तुतिविद्या (जिनशतक)** और **रत्नकरण्डश्रावकाचार**, सोमदेवसूरि रचित **अध्यात्मामृतरंगिणी**, हस्तिमल्ल प्रणीत **विक्रांत कौरव नाटकम्**, अमृतचन्द्र रचित **लघुतत्वस्फोट** और **तत्वार्थसार**, कुन्दकुन्द के **समयसार** और **कुन्दकुन्द भारती**, देवसेन के **आराधनासार**, वीरनन्दि के **आचारसार**, कवि असग प्रणीत **वर्धमानचरितम्** और **शांतिनाथचरितम्**, भट्टारक सकलकीर्ति का **पार्श्वनाथचरितम्**, गुणभद्र कृत **धन्यकुमारचरितम्**, भट्टारक सोमकीर्ति की **सप्तव्यसन कथा**। **स्वयंभूस्तोत्र**, **भक्तामरस्तोत्र**, **कल्याण मन्दिर स्तोत्र**, **एकीभावस्तोत्र**, **विशापहारस्तोत्र**, **जिनचतुर्विंशतिस्तोत्रम्** और **सामायिक पाठ** का उन्होंने अनुवाद किया। उन्होंने **करणानुयोग दीपक** का तीन भागों में, बालकोपयोगी,

रत्नकरण्डश्रावकाचार तथा **द्रव्यानुयोग प्रवेशिका** का भी प्रणयन किया। 1200 श्लोकप्रमाण **सहस्रनामांकित पूजा, पंचबालयति पूजा, रविवार व्रत** आदि अनेक **व्रत उद्यापनम्, महावीरस्तोत्रम, बाहुबली अष्टक, श्रीपाल चरितम्** (गद्य) उनकी संस्कृत में रचित मौलिक कृतियां हैं। उन्होंने हिन्दी में **चौबीसीपुराण** की भी रचना की थी और **धर्मकुसुमोद्यान** का अनुवाद किया था। सन् 1936 ई. में साहित्याचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करने के अनन्तर उन्होंने संस्कृत में **'ऋजुकाव्य'** नामक एक प्रबन्ध–काव्य का भी प्रणयन प्रारम्भ किया था जिसे बाद में उन्होंने अपूर्ण छोड़ दिया। पन्नालाल जी ने सन् 1942 ई. के आस–पास **'सुप्रभात'** नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित की थी। अपने जीवन निर्माता **गणेश प्रसाद वर्णी जी की जीवन गाथा** दो भागों में संकलित–सम्पादित करने, और उनका **अभिनन्दन ग्रन्थ** तथा **स्मृति ग्रन्थ** सम्पादित करने का पं. पन्नालाल जी को श्रेय है। इनके अतिरिक्त **आचार्य शिवसागर स्मृति ग्रन्थ, सागर में विद्यासागर, सागर की पंचकल्याणक स्मारिका, श्री गणेश दिग. जैन संस्कृत महाविद्यालय, सागर, का स्वर्णजयंती विशेषांक** और **भा. दिग. जैन विद्वत्परिषद की रजत जयंती स्मारिका** के सम्पादन में भी उनका योगदान रहा। साथ ही डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री के चार खण्डों में विभाजित विशाल ग्रन्थ **'तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा'** के प्रकाशन और प्रसार में उनका महती योग रहा। इस प्रकार पं. पन्नालाल साहित्याचार्य द्वारा रचित, अनूदित और सम्पादित कृतियों के विपुल समुदाय से जैन वाङ्मय तो समृद्ध हुआ ही, संस्कृत और हिन्दी भारती के भण्डार की भी प्रभूत अभिवृद्धि हुई।

सन् 1944 ई. में 'वीर शासन जयन्ती' की पुण्य वेला में गणेश प्रसाद वर्णी जी की प्रेरणा से अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद की स्थापना हुई थी। विद्वत्परिषद की स्थापना के समय से ही उससे सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य सन् 1946 ई. में उसके संयुक्त मंत्री, सन् 1953 ई. में मंत्री, सन् 1981 ई. में अध्यक्ष तथा सन् 1985 ई. में सरंक्षक सर्वसम्मति से बनाये गये। उन्होंने अपने कार्यकाल में अपनी कर्मठता से विद्वत्परिषद को प्राणवान बनाये रखा और उसके माध्यम से अनेक महत्वपूर्ण साहित्यिक कृतियों और अभिनन्दन ग्रन्थों का प्रकाशन कराया।

सम्मान

अपनी अद्वितीय साहित्यिक प्रतिभा और साहित्य के क्षेत्र में किये गये अनुपम योगदान के लिये साधुमना डॉ. पन्नालाल जी को समय–समय पर अनेक राष्ट्रीय, साहित्यिक एवं सामाजिक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। **सन् 1960 ई.** में वह भारत के प्रथम **राष्ट्रपति** डॉ. राजेन्द्र प्रसाद **द्वारा सम्मानित** किये गये। उसी वर्ष उन्हें **जीवन्धर चम्पू** के सम्पादन हेतु भोपाल में **'मित्र पुरस्कार'** से पुरस्कृत किया गया। **सन् 1969 ई.** में **आदर्श संस्कृत शिक्षक** के रूप में वह राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित हुए। **सन् 1973 ई.** में **'गद्यचिन्तामणि'** के सम्पादन हेतु **'श्री गणेश वर्णी पुरस्कार'**, तथा शिवपुरी में विद्वत्परिषद की 25 वर्ष तक समर्पित सेवा हेतु **'रजत मंजूषा'** से, **सन् 1977 ई.** में **'पुरुदेव चम्पू'** के सम्पादन हेतु तथा **सन् 1983 ई.** में अपनी मौलिक कृति **'सम्यक्त्वचिन्तामणि'** के लिये **'श्री महावीर पुरस्कार'** से वह सम्मानित किये गये। **सन् 1976 ई.** में सागर में उन्हें **'विद्यावारिधि'** की उपाधि से विभूषित किया गया। **सन् 1987 ई.** में **'श्रमण भारती पुरस्कार', सन् 1990 ई.** में अहिंसा इन्टरनेशनल सोसायटी, नई दिल्ली, द्वारा **'डिप्टीमल जैन पुरस्कार'** और **सन् 1999 ई.** में श्रवणबेलगोला में **'गोम्मटेश्वर विद्यापीठ पुरस्कार'** उन्हें प्रदान किये गये। **सन् 1990 ई.** में उन्हें सागर में समाज द्वारा **अभिनन्दन ग्रन्थ** अर्पित किया गया। उनके मरणोपरान्त भी **सन् 2003 ई.** में उनकी द्वितीय पुण्यतिथि पर **'वसंत–परिमल'** नामक भव्य पुण्य स्मरण स्मारिका प्रकाशित हुई और **17 दिसम्बर, 2006 ई.** को सागर में उनकी मूर्ति का अनावरण कर वहां पर एक मार्ग का नामकरण **"साहित्याचार्य डॉ. पं. पन्नालाल जैन मार्ग"** किया गया।

स्वच्छ धोती, खादी की टोपी, कुर्ता, लम्बा शरीर, कान्तिमय चेहरा, प्रोल्लसित मुख और वैदुष्यपूर्ण वाणी – यह शब्द–चित्र उकेरा है पंडित जी के व्यक्तित्व का उनके शिष्य साहित्याचार्य पं. शिखरचन्द्र जैन ने। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुन्दरबाई जी ने उनका साथ निभाया सन् 1999 ई. तक। पंडित जी को 6 पुत्र और 3 पुत्रियों के पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त रहा। सभी सन्तान सुशिक्षित रहीं और लौकिक दृष्टि से समृद्ध। आयु, विद्या, यश और बल से परिपूर्ण इन महान सरस्वती–साधक को मेरा सादर नमन् है।

(**शोधादर्श –61**, मार्च 2007, से अनुकूलित।)

चमत्कार की जय–जयकार

– श्री अजित प्रसाद जैन

हमारे देखने में यह आया है कि जब कहीं कोई मूर्ति जमीन के अन्दर गड़ी प्राप्त होती है तो उसे चमत्कार मान लिया जाता है और उसकी जय–जयकार होने लगती है। अभी कुछ समय पूर्व लखनऊ के निकटवर्ती जिला सीतापुर के एक गांव में नींव खोदते हुए एक जिन प्रतिमा मिली थी। हमें इसकी जानकारी नहीं है कि वह मूर्ति सांगोपांग थी अथवा कहीं से खण्डित थी। गांव वालों ने मूर्ति को कहीं और देने से इन्कार कर दिया और वहीं उसके लिए एक महामन्दिर बनाने की योजना बना डाली। हमें यह नहीं पता है कि उस गांव में जैन धर्मानुयायी कोई परिवार है भी या नहीं और वहां मूर्ति के पूजा–प्रक्षाल की कोई व्यवस्था हो भी सकती है या नहीं। किन्तु ऐसी योजनाओं में काम करने वाले कार्यकर्ताओं की कोई कमी नहीं रहती क्योंकि जो धन व्यय होता है, उसका हिसाब किसी को देना नहीं पड़ता। ऐसी योजनाओं में रुपया देने वाले दातार खुश रहते हैं – उन्हें 'दानवीर', 'दानशिरोमणि' जैसी उपाधियां सरलता से प्राप्त हो जाती हैं।

जिला बाराबंकी में एक सुदूर स्थल पर गढ़ाकोटा (किला) था, जिसके विशाल दरवाजे पर रक्षक के रूप में जिनमूर्ति को स्थापित कर दिया गया था। पर समय के साथ अब न तो गढ़ाकोटा रहा और ना ही उसका विशाल दरवाजा। सबके सब ध्वस्त हो गये।

जब पुरा सम्पदा हमारी लापरवाही से नष्टप्रायः होती जा रही हो तब अनावश्यक नवीन मन्दिर निर्माण का क्या और कितना औचित्य है, यह विचारणीय है।

वास्तव में जिनेन्द्र भगवान के पंचकल्याणक स्थलों को स्मरण रखने के लिए उन्हें ही 'तीर्थ' संज्ञा दी गई। यह कैसी विडम्बना है कि आज अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की जन्मस्थली (वासुकुण्ड, वैशाली) तथा निर्वाण स्थली पावा (कुशीनगर के निकट पावा) का अभी तक अपेक्षित रूप में विकास नहीं हो पाया है यद्यपि सभी इतिहासवेत्ता, पुरातत्ववेत्ता तथा साहित्यकार एक–मत से स्वीकार करते हैं कि ये ही भगवान की जन्म और मोक्ष स्थली हैं।

कुछ ऐसे अतिशय क्षेत्र अवश्य हैं (यथा – चांदनपुर महावीर जी, तिजारा तथा बालाजी का हनुमान मन्दिर) जहां श्रद्धालु भक्तों की इतनी भीड़ लगी रहती है कि बहुत से दर्शनार्थियों को मूर्ति के दर्शन भी नहीं हो पाते।

कर्मकाण्ड हम ने वैदिक संस्कृति से उधार लिया हुआ है। किन्तु यह तो मानना ही पड़ेगा कि व्यवहार में स्वप्रयोजन की सिद्धि के लिये सभी लालायित रहते हैं। हमारे कई महामुनि और महा–आर्यिका माताओं ने कर्मकाण्ड की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने के लिये अनेक छोटे–बड़े विधान मण्डल बना डाले। इन विधानों को करने वाले धर्मनिष्ठ श्रावक यह समझते हैं कि हम बहुत बड़ा धर्म कार्य कर रहे हैं और जिस अनुपात में व्यय होगा फल भी वैसा ही मिलेगा। वस्तुतः जैन धर्म आध्यात्मिक उत्कर्ष का धर्म है और उसमें कर्मकाण्ड की कोई उपयोगिता नहीं है।

हमारी अपनी दृष्टि में जिन मन्दिर भगवान के समवशरण के प्रतीक हैं। जिन मन्दिर जिसमें जिन प्रतिमा एक ही हो और भव्य हो, का रूप बिल्कुल वैसा ही होता है जैसे कि भगवान की दिव्य ध्वनि खिरनी अभी समाप्त हुई हो। जिनवाणी के प्रतीकरूप में प्रायः प्रत्येक मन्दिर में आवश्यक शास्त्र रहते हैं, और यह भी कि यदि कोई साधु–साध्वी भी दर्शन के समय वहां विहार कर रहे हों, तो वह जिन मन्दिर भगवान के चतुर्विध संघ का रूप प्राप्त कर लेता है।

(मृत्यु से तीन दिन पूर्व सिर में चोट लग जाने के उपरान्त 22 जून 2005 को श्री अजित प्रसाद जैन द्वारा अपने भ्रातृज रमा कान्त जैन को लिखवाया गया उनका अन्तिम सम्पादकीय, जो शोधादर्श–56, जुलाई 2005, में प्रकाशित है।)

✧ ✧ ✧

मुद्रण विधा और जैन साहित्य

– डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

मुद्रण कला का इतिहास

प्राचीन साहित्य की खोज करने वाले प्रसिद्ध विद्वान काका कालेलकर जी के शब्दों में "यह बात बिल्कुल सही है कि जैसे लेखन कला के प्रचार से ज्ञान प्राप्ति का मार्ग सुलभ हुआ है वैसे ही छापने की कला के प्रचार से यह मार्ग सहस्र गुना अधिक सुलभ और विस्तृत हो गया है।" जहां तक लेखन कला के प्रारम्भ का प्रश्न है वह सर्व प्रथम भारतवर्ष में ही हुआ प्रतीत होता है। जैन अनुश्रुति के अनुसार कर्मयुग के आदि में आदि–पुरुष महा–मानव ऋषभदेव ने अपनी प्रिय पुत्री ब्राह्मी के उपलक्ष से सर्व प्रथम मानवी लिपि का आविष्कार किया था। सिन्धु घाटी के पुरातत्व में उपलब्ध मुद्रालेख भी पांच–छः हजार वर्ष प्राचीन हैं और उनसे अधिक प्राचीन लेख संसार के किसी अन्य भाग में अभी तक प्राप्त नहीं हुए हैं। लेखनकला के सर्व प्राचीन उदाहरण पाषाण आदि पर ही अंकित मिलते हैं। तत्पश्चात् ताम्रपत्र आदि धात्वी साधनों का भी उपयोग होने लगा। फिर ताड़पत्र, भूर्जपत्र आदि वानस्पतिक पत्रों पर लिखाई आरम्भ हुई। अन्ततः सन् ईस्वी प्रथम सहस्राब्दि के मध्य के लगभग कागज का प्रयोग आरम्भ हुआ।

छापेखाने का सर्व प्रथम आविष्कार चीन देश में हुआ, और सर्व प्रथम ज्ञात मुद्रित चीनी पुस्तक की मुद्रण तिथि 11 मई, सन 868 ई., है। इस पुस्तक की छपाई ब्लाक–प्रिन्टिंग में हुई थी, किन्तु अलग–अलग बने टाइपों से छापने की कला का आविष्कार चीन देश में ही पो. शेंग नामक व्यक्ति के द्वारा सन् 1041–49 के मध्य हुआ। यूरोप में मुद्रण का प्रारम्भ जर्मनी देश निवासी जॉन गटेनबर्ग नामक व्यक्ति ने 15वीं शताब्दी ई. के मध्य किया था।

भारतवर्ष में छापेखाने का प्रथम प्रवेश पुर्तगाली उपनिवेश गोआ के सेंट पाल कालिज में, जेसुइट पादरियों की अध्यक्षता में, जुआन बुस्टामान्टे नामक मुद्रक द्वारा सन् 1556 ई. में हुआ। भारत में मुद्रित सर्व प्रथम पुस्तक लातीनी भाषा की **'कानक्लूसोस फिलोसोफिकास'** नामक दार्शनिक पुस्तक थी जो उसी वर्ष उक्त छापेखाने में छपी थी। यह पुस्तक तथा इसके बाद छपने वाली दूसरी पुस्तक भी अब उपलब्ध नहीं है। भारतवर्ष में मुद्रित सर्व–प्रथम उपलब्ध पुस्तक उसी मुद्रणालय में सन् 1560 में छपी **'कोम्पेंदिपु**

स्पिस्तु आलद व्हिद क्रिस्तौ' है जो न्यूयार्क (अमेरिका) के राष्ट्रीय सार्वजनिक पुस्तकालय में विद्यमान है।

इसके कुछ काल पश्चात् गोआ प्रदेश के अन्तर्गत ही रायतुर नामक स्थान के सेंट इग्नेशस कालिज में एक अन्य मुद्रणालय चालू हुआ जिसमें भारतीय भाषाओं में भी पुस्तकें छपने लगी। इस छापेखाने में मुद्रित भारतीय भाषा की सर्व–प्रथम ज्ञात पुस्तक फादर थामस स्टीफेन्स कृत '**क्राइस्ट पुराण**' थी। यह पुस्तक मराठी भाषा में ओवी नामक छन्द विशेष में लिखी गई थी किन्तु रोमन लिपि में थी, और यह सन् 1616 ई. में मुद्रित हुई थी। चालीस वर्ष के बीच में इसके क्रमशः तीन संस्करण प्रकाशित हुए थे, किन्तु उनकी एक भी प्रति आज उपलब्ध नहीं है, यद्यपि उसकी रोमन, कन्नडी, देवनागरी लिपियों में निबद्ध अनेक हस्तलिखित प्रतियां विद्यमान हैं। उसी छापेखाने से सन् 1622 में मुद्रित '**खिस्ती धर्म सिद्धान्त**' नामक मराठी भाषा और रोमन लिपि की पुस्तक आज भी उपलब्ध है। इसके उपरान्त डेनिश मिशनरियों और फिर अंग्रेज पादरियों ने इस दिशा में प्रयत्नशील होकर छापेखाने के प्रचार में योग दिया।

देवनागरी अक्षरों में ब्लाक–प्रिटिंग से छपा सर्व–प्रथम लेख सन् 1678 ई. का है। सन् 1796 ई. में लिथोग्राफी का आविष्कार हुआ। उसमें टाइप बनाने की कठिनाई न होने के कारण शीघ्र ही उसका अत्यधिक प्रचार हो गया और 19वीं शताब्दी में तो देशी भाषाओं के अनेक प्राचीन ग्रंथ लिथो से छपे। 18वीं शताब्दी के अन्त के लगभग ही बम्बई और बंगाल में सर्वप्रथम एक–एक मुद्रणालय स्थापित हुआ। भारतीय मुद्रणकला के इतिहास में सीरामपुर (बंगाल) के मुद्रणालय, मुद्रणकला विशारद सर चार्ल्स विल्किन्स, उनके सहयोगी विस्प पंचानन और गृहस्थ मिशनरी डॉ. विलियम कैलरी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। उक्त सीरामपुर छापेखाने से 19वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में **बाइबिल** के अनुवाद धड़ाधड़ प्रकाशित हुए। धीरे–धीरे भारतीय पुस्तकें भी देशी भाषाओं में छपने लगी। नागरी लिपि की सर्व प्रथम मुद्रित पुस्तकें कुरियर प्रेस, बम्बई, द्वारा प्रकाशित '**विदुर नीति**' (1823 ई.) और '**सिंहासन बत्तीसी**' (1824 ई.) हैं, किन्तु इन दोनों की भाषा मराठी है। हिन्दी भाषा और नागरी लिपि की सर्व–प्रथम पुस्तक इंग्लैंड में छपी थी और 19वीं शताब्दी के मध्य से वे भारतवर्ष में भी छपने लगीं।

जैन प्रकाशन का इतिहास

जैन साहित्य में हिन्दी भाषा और नागरी लिपि की सर्व प्रथम पुस्तक प्रसिद्ध दिगम्बर विद्वान पं. बनारसीदास (17वीं शताब्दी) कृत **'साधु वन्दना'** थी जो सन् 1850 ई. में आगरा नगर में छपी थी। अतएव जैन पुस्तक साहित्य का अथवा उसके मुद्रण व प्रकाशन का प्रारम्भ सन् 1850 ई. से ही मानना उचित है।

वैसे तो, जहां तक पाश्चात्य जगत का प्रश्न है, यूरोपीय विद्वानों और प्राच्यविदों ने 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ से जैन धर्म और संस्कृति में दिलचस्पी लेनी प्रारम्भ कर दी थी। सन् 1799 ई. में लेफ्टिनेन्ट विल्फ्रेड को **'त्रिलोक दर्पण'** नामक जैन ग्रंथ की एक प्रति हाथ लग गई। उनके स्वयं के कथनानुसार ब्राह्मण पंडितों ने साम्प्रदायिक विद्वेष के कारण उस पर कुछ भी प्रकाश डालने से साफ इन्कार कर दिया। अतएव विल्फ्रेड साहब स्वयं ही उस ग्रन्थ पर से जैनों के सम्बन्ध में जो कुछ जान सके वह उन्होंने 'एशियाटिक रिसर्चेज', भाग तीन, पृष्ठ 192 पर प्रकाशित कर दिया। विदेशी भ्रमणार्थियों के द्वारा किये उल्लेखों को छोड़कर पाश्चात्य विद्वानों द्वारा लिखित सर्व–प्रथम जैन सम्बन्धी रचना यही है। सन् 1809 में कर्नल मेकेंजी का निबन्ध 'ऐन एकाउन्ट ऑफ दी जैन्स' और एच.टी. कोलबुक का निबन्ध 'आबजरवेशन्स ऑन दी जैन्स' कलकत्ता के 'एशियाटिक रिसर्चेज' (जिल्द 9, पृ. 243–286) में प्रकाशित हुए। सन् 1825 में पादरी जे. ए. डुबाइ के संस्मरण पेरिस (फ्रान्स) से प्रकाशित हुए जिनमें जैन धर्म और जैन जाति के विषय में बहुत कुछ लिखा है; उसी वर्ष ए. स्टरलिंग ने **'उड़ीसा की जैन गुफाओं'** पर अपना लेख प्रकाशित किया। सन् 1827 में फ्रेन्कलिन, हैमिल्टन, डेलमेन आदि विद्वानों ने जैन विषयक लेख लिखे। तदुपरान्त उक्त शताब्दी के मध्य पर्यन्त एच.एच. विल्सन, जेम्स टाड, जे. स्टीवेन्सन, जे.प्रिन्सेप, जे. फर्गुसन आदि विद्वानों ने अपने लेखों द्वारा जैन सम्बन्धी लोक ज्ञान की अभिवृद्धि की। किन्तु जैन धर्म, संस्कृति, साहित्य, पुरातत्व और इतिहास पर व्यवस्थित शोध–खोज और साहित्य–सृजन सन् 1850 के पश्चात् ही प्रारम्भ हुए और इस दिशा में पिशेल, होर्नले, फर्लांग, पुल्ले, बूलर, जैकोबी, वेबर, लेसन, फ्लीट, राइस द्वय, टामस, लूडर्स, बर्गेस, कीहार्न, गिरनाट, स्मिथ, हुल्टज्श, क्लैट, ओल्डनवर्ग, किटेल, कनिंघम, हर्टले,

मोनियर—विलियम्स, विन्टरनिट्ज, पीटरसन, ल्यूमेन आदि विभिन्न जातीय प्रसिद्ध यूरोपिय प्राच्यविदों ने तथा भगवान लाल इन्द्रजी, आर. जी. भंडारकर, भाऊदजी, के.बी. पाठक, ध्रुव, तैलंग, राजेन्द्र लाल मित्र, सतीश चन्द्र विद्याभूषण, टी.के. लड्डू, के.पी. जायसवाल आदि प्रख्यात भारतीय विद्वानों ने प्रशंसनीय कार्य किया। किन्तु 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही इस कार्य में कुछ शिथिलता आने लगी। प्रथम विश्व युद्ध (1914—18) के समय से तो उपरोक्त प्रकार के स्वतंत्र प्रकाण्ड यूरोपीय विद्वानों का इस क्षेत्र में प्रायः अभाव ही हो गया। केवल पुरातत्वादि विभागों से सम्बन्धित कतिपय राजकीय अधिकारी ही प्रसंगवश कुछ कार्य करते रहे। किन्तु साथ ही साथ यह संतोष है कि अनेक जैन—अजैन भारतीय विद्वान इन कार्यों के सम्पादन में लगे हुए हैं।

यद्यपि प्रथम जैन पुस्तक दिगम्बर सम्प्रदाय द्वारा सन् 1850 में मुद्रित कराई गई थी, किन्तु प्रारम्भ में रूढ़िग्रस्त अन्धश्रद्धालु जैन समाज ने छापे का अत्यन्त विरोध किया। एक जैन समाज ने ही क्या, प्रारम्भ में हिन्दू समाज ने भी उसका तीव्र विरोध किया। सन् 1863 में प्रकाशित श्री गोविन्द नारायण माडगांवकर कृत' **'मुम्बई वर्णन'** नामक पुस्तक के पृ. 248 पर लिखा है — ''हमारे कुछ भोले व नैष्ठिक ब्राह्मण छपे कागज का स्पर्श करते डरते थे और आज भी डरते हैं। बम्बई में और बम्बई के बाहर भी ऐसे बहुत से लोग है जो छपी हुई पुस्तक को पढ़ना तो दूर रहा, छपे कागज को स्पर्श तक नहीं करते हैं।''

यही दशा, बल्कि इससे भी कुछ बुरी दशा जैन समाज की थी। जैनी लोग अपने मन्दिरों के शास्त्र भंडारों में संग्रहीत हस्तलिखित ग्रन्थों को देव प्रतिमा तुल्य पवित्र और पूजनीय मानते थे और उनका विधिवत् दर्शन पूजन करना ही अलम समझते थे। यदि किसी साधु या विद्वान् पंडित आदि का समागम हुआ तो पुनः स्नानादि द्वारा शरीर शुद्धि करके मन्दिर में रखे शुद्ध वस्त्रों को पहन कर दरी आदि के फर्श पर भी चटाई बिछाकर और शास्त्र जी को चौकी पर विराजमान करके बड़ी विनय पूर्वक उनका वाचन कर श्रद्धालु जनता को सुनाया जाला था। शास्त्र सभा का डिसिप्लिन बड़ा भक्ति और विनय पूर्ण होता था। जिन गृहस्थों को शास्त्र स्वाध्याय का

नियम होता वे भी शरीर शुद्ध कर पूजादि के उपयुक्त शुद्ध वस्त्र धोती दुपट्टा आदि पहन मन्दिर के स्वाध्याय भवन में ही बैठ कर विनय पूर्वक उक्त ग्रन्थों का स्वाध्याय कर सकते थे। सामान्य दैनिक वस्त्र चाहे वे कितने भी शुद्ध क्यों न हों उन्हें पहने हुए शास्त्र जी को स्पर्श भी नहीं किया जा सकता था। शूद्रों का तो मन्दिर में या शास्त्र भंडार में प्रवेश भी नहीं हो सकता था और स्त्रियां भी शास्त्रों को नहीं छू सकती थीं। अन्य धर्मावलम्बी सवर्ण व्यक्तियों को भी ये शास्त्र इसलिए हीं दिखाये जाते थे कि वे लोग मिथ्याश्रद्धानी होने के कारण हमारी देव गुरु के समकक्ष पूज्य जिनवाणी की अविनय, निन्दादि न करें। तब फिर उनके छपाने में तो जिसमें कि किसी भी जाति का कोई भी व्यक्ति कैसी भी अपवित्र अवस्था में, चमड़े के जूते आदि पहने हुए ही उन्हें छूएगा, कहीं भी पटक या डाल देगा। छांपे की स्याही में चर्बी आदि महा अपवित्र पदार्थों के होने की संभावना और छापे के विकास के साथ–साथ आविष्कृत मशीन से बने महा अशुद्ध कागज पर उनका छपना, छपने के पश्चात् भी उनकी पूर्ववत विनय बनाये रखना असंभव होना आदि सर्व प्रकार उन परम पूज्य शास्त्रों की अविनय और विडम्बना ही होगी जो कि एक महापाप होगा। यह सब उस समय की रूढ़िभक्त और आधुनिक प्रकाश की दृष्टि से अविकसित श्रद्धालु समाज जिसके लिए उक्त शास्त्रों का महत्त्व केवल धार्मिक ही था, कैसे सहन कर सकती थी। उसकी दृष्टि में तो यत्न पूर्वक वेष्ठनों में लिपटे हुए और देव मन्दिरों के सरस्वती भंडारों में विराजमान वे सब ग्रन्थ बिला लिहाज भाषा, भाव, विषय, कर्ता, प्राचीनता, प्रामाणिकता आदि के समान रूप से पूजनीय एवं माननीय थे। उनका अन्य कोई महत्व या मूल्य उसकी दृष्टि में था ही नहीं।

छापे के इस प्रबल विरोध का बहुत कुछ आभास दिगम्बर जैन महासभा के मुख पत्र हिन्दी **जैन गजट** वर्ष 2 अंक (8 मार्च सन् 1897 ई.) के पृ. 13 पर प्रकाशित निम्नलिखित समाचार से हो जाता है – "जैन शास्त्रों का छपना – ता. 24 जनवरी सन 1897 को जैनोन्नति कारक सभा, प्रयाग, का 17वां समागम हुआ। यह समागम इस विषय पर विचार करने के लिये किया था कि 'जैन शास्त्र छपने चाहिये या नहीं।' सभा के

नियमानुसार स्थानिक जैनियों को इस विषय की सूचना दी गई थी। लाला बच्चूलाल ने जो इस विषय के व्याख्यान दाता नियत किये गये थे बड़े जोर–शोर से एक घंटे तक जैन शास्त्रों के छपने के निषेध में बहुत कुछ कहा। उनके पश्चात् बहुत से भाइयों ने उनकी बात को पुष्ट किया किन्तु उनके विपक्ष में किसी ने कुछ भी नहीं कहा। और उपस्थित महाशयों में से सबने एक मत होकर बात को स्वीकार किया कि हम छपे हुए ग्रंथ न लेंगे, न पढ़ेंगे, न पढ़ावेंगे और इसके प्रचार को यथाशक्ति रोकेंगे।

जो कि आजकल इस विषय का बहुत कोलाहल है इस वास्ते इस सभा ने प्रयागस्थ जैनियों की अनुमति सर्व साधारण पर प्रकाशित करने के अभिप्राय से इस लेख को मुद्रित कराना आवश्यक समझा। – सभा की आज्ञानुसार सुमतिचन्द्र मंत्री जैनोन्नति कारक सभा, प्रयाग।''

लाला बच्चूलाल जी तथा इनके सहयोगियों के छापा विरोधी कितने ही लेख भी **जैन गजट** आदि पत्रों में प्रकाशित हुए थे और अन्य कितने ही स्थानों की जैन पंचायतों ने भी उपरोक्त जैसे प्रस्ताव पास किये थे। ता. 17 जनवरी सन् 1898 के **जैन गजट** में प्रकाशित अपने एक लेख में इन्हीं बच्चूलाल ने स्पष्ट लिखा था कि ''जैन शास्त्रों का छपाना महान अविनय है अतः भयंकर पाप बंध का कारण है, और जो जैन शास्त्र अजैनों के हाथ में पहुंचे भी हैं वे श्वेताम्बर आम्नाय के ही पहुंचे। दिगम्बरों को ऐसी मूर्खता नहीं करनी चाहिए और न दूसरों के हाथ में देने की भूल करनी चाहिये।''

इसमें सन्देह नहीं है कि उनके धर्म भीरु और अदूरदर्शी साधर्मियों ने इन सदुपदेशों पर आचरण करने का अथक प्रयत्न किया। अभी 10–12 वर्ष पूर्व ही जब धवलादि दिगम्बर आम्म ग्रन्थों का मुद्रण प्रकाशन प्रारम्भ हो रहा था तो कई एक अनेक पदवियों एवं उपाधियों से अलंकृत दिग्गज जैन पण्डितों ने आगम ग्रंथों के छपाये जाने और गृहस्थों द्वारा उनका पठन–पाठन किये जाने का भारी विरोध किया था। आज सन् 1950 में भी यत्र–तत्र ऐसे धर्म भीरु श्रीमान मिल ही जाते हैं जो छपे शास्त्रों का पढ़ना तो दूर रहा, उन्हें छूने में भी पाप समझते हैं और परम पूज्य जिनवाणी की इस दुर्दशा पर आंसू बहाया करते हैं।

किन्तु समाज में अब ऐसे विवेकशील व्यक्ति भी उत्पन्न होने लगे जिन्होंने नवीन प्रणाली के अनुसार शिक्षा प्राप्त की थी और जिन्हें पाश्चात्य विचारधाराओं के सम्पर्क में आने का सुयोग मिला था। शनैः–शनैः उनकी संख्या बढ़ने लगी। ये नवयुवक समय के साथ–साथ चलना चाहते थे, प्रगतिशील युग की प्रगति से पिछड़ जाने के लिए तैयार नहीं थे, वे नवीन सभ्यता के नित्य प्रकाश में आने वाले आविष्कारों को अपनाना अन्य समाजों के उन्नतिशील वर्गों की भांति ही अपनी समाज के लिए भी परम आवश्यक समझते थे। उनका विश्वास था कि अब अन्धकार को भेद कर बाहर प्रकाश में आने का युग है, अतएव उन्होंने इरादा कर लिया कि अपने अमूल्य साहित्यिक रत्नों को मुद्रण कला की सहायता से बहुलता के साथ प्रकाश में लाकर स्वयं उनसे अधिकाधिक लाभ उठावें ही, साथ ही दूसरे जिज्ञासुओं को भी अपने धर्म, साहित्य और संस्कृति के अध्ययन करने का तथा महत्व समझने का सुयोग प्रदान करें।

फलस्वरूप 19वीं शताब्दी के मध्य के लगभग छापे के पक्ष में आन्दोलन आरम्भ हुआ। प्रथम पच्चीस वर्षों में वह कुछ प्रगति न कर पाया किन्तु सन् 1857 के पश्चात् इस आन्दोलन ने उग्र रूप धारण किया। उधर इस आन्दोलन के बढ़ते हुए बल के साथ–साथ स्थितिपालकों का विरोध भी अधिकाधिक जोर पकड़ने लगा। 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक यह द्वन्द बड़े संघर्ष के साथ चला। आन्दोलन कर्ताओं को धमकियें दी गई, पीटा गया, जाति से बहिष्कृत किया गया, उनका मन्दिर में आना बन्द किया गया, स्थान–स्थान में इस प्रश्न को लेकर दल बन्दियां हो गई। अन्ततः 20वीं शताब्दी के प्रथम दशक में आन्दोलन सफल हो गया और विरोध शिथिल–प्रायः हो गया।

उक्त आन्दोलन में श्वेताम्बर सम्प्रदाय ने कुछ शीघ्र ही सफलता प्राप्त कर ली थी। श्वेताम्बर समाज में धार्मिक विषयों में उनके बहुसंख्यक साधु वर्ग का ही प्रभुत्व रहता आया है, उनके निर्णयों और आदेशों को गृहस्थ जन 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' मानते हैं और इस प्रसंग में उनकी यह प्रवृत्ति सुफलदायी ही हुई। इन साधुओं में से कुछ दूरदर्शी महात्माओं को यह सुबुद्धि शीघ्र ही उत्पन्न हो गई कि जब छापा देश में आ ही चुका है

और देर–सबेर इसे अपनाना ही होगा तो क्यों न धर्म ग्रन्थों की छपाई पर से शीघ्र ही प्रतिबन्ध हटा दिया जाये। फल यह हुआ कि दिगम्बर साहित्य की अपेक्षा श्वेताम्बर साहित्य बहुत पहले छपने लगा और सन् 1870 से 1890 के बीच सैकड़ों श्वेताम्बर ग्रन्थ प्रकाश में आ गये। सौभाग्य से यह समय ऐसा था जब दर्जनों उच्च कोटि के पाश्चात्य विद्वान और प्राच्यविद भारतीय धर्मों, दर्शनों, संस्कृति, पुरातन साहित्य एवं कला, पुरातत्व, जातियों के इतिहास आदि विविध विषयों के अध्ययन में गहरी दिलचस्पी ले रहे थे। छापे के समर्थक उक्त श्वेताम्बर साधुओं और गृहस्थों ने इन विद्वानों के लिए अपना साहित्य सुलभ कर दिया और उनके द्वारा उसके उपयोग में किसी प्रकार की रुकावट डालने के स्थान में उल्टा उन्हें भरसक प्रोत्साहन, सहयोग और सुविधा प्रदान की।

जैन पुस्तक साहित्य के इतिहास का प्रारम्भ सन् 1850 ई. अथवा विक्रम संवत् 1900 के लगभग से होता है। आधुनिक शैली में व्यवस्थित जैनाध्ययन का प्रारम्भ और हिन्दी जैन साहित्य के आधुनिक युग का प्रारम्भ भी इसी समय से होता है। स्वयं अखिल भारतीय दृष्टि से भी राष्ट्रीयता का उदय, भारतीय संस्कृति के अध्ययन का प्रारंभ और हिन्दी साहित्य का आधुनिक युग भी सन् 1857 के स्वातन्त्र्य समर के उपरान्त ही सन् 1860 ई. से अथवा वि. सं. 1920 के लगभग से ही माना जाता है।

(डॉ. साहब की पुस्तक **प्रकाशित जैन साहित्य** से संकलित।)

✦✦✦

नमो नारायण की शास्त्र सभा

ब्राह्मण – श्रमण संवाद

– डॉ. शशि कान्त

सभा मण्डप में मध्य रेखा के दाहिनी ओर ब्राह्मण और बायीं ओर श्रमण विचारधाराओं के प्रतिनिधि बैठे हैं। ब्राह्मण प्रतिनिधियों की संख्या अधिक है, श्रमण प्रतिनिधि अल्प संख्या में हैं। सभा के प्रारम्भ होने पर यह स्पष्ट कर दिया गया कि नीति–अनीति या नैतिकता की कोई बात नहीं की जायेगी। वह पुरानी बात है जब के.एल.सहगल ने आज से 60 वर्ष पहले यह गाना गया था –

आहें न भर, आंसू न बहा, फ़रियाद न कर,
नामे वफ़ा बदनाम न कर,
शर्मो–हया के साये में, दिल जलता है तो जलने दे।

ज़माना बदल चुका है। शर्मो–हया अब कल्पना की चीज़ रह गई है।

बहुमत वाले पक्ष को **नमो नारायण** ने बोलने के लिए पहले आमंत्रित किया।

ब्राह्मण : इस सृष्टि के कर्ता ब्रह्म हैं, वही इसके विधाता और नियंता हैं। उनकी भक्ति और कृपा ही सृष्टि के लिए अभीष्ट है।

श्रमण : ऐसा नहीं है। सृष्टि के निर्माण का आधार दो तत्त्व – जीव और अजीव हैं। जीव जीवनी शक्ति, प्राणवान अथवा आत्मा है। अजीव पुदगल या प्राणहीन पदार्थ है। इन्हीं दो तत्त्वों के संक्रमण और संघर्षण से सृष्टि की उत्पत्ति होती है और उसका पर्याय–परिवर्तन एवं परिचालन होता है।

ब्राह्मण : नहीं महाराज। सृष्टि का आधार तीन देव हैं – ब्रह्मा कर्ता हैं, विष्णु प्रतिपालक हैं और शिव संहारक हैं।

श्रमण : यदि दैवत्व के यही तीन रूप हैं तो इनका निदान पंच महाव्रतों के पालन द्वारा किया जा सकता है। ये पंच महाव्रत हैं –

1 अहिंसा – अर्थात् किसी भी जीव को, यानि कि प्राणी को, मन, वचन या काया से किसी प्रकार क्लेश नहीं पहुंचाना, कोई पीड़ा अथवा संत्रास नहीं देना;

2 **सत्य** – अर्थात् जो जैसा है और जिसे हमने जिस रूप में देखा है, उसको स्वीकार करना;

3 **अचौर्य** – अर्थात् किसी दूसरे की वस्तु को, और किसी दूसरे के विचारों को भी, उसके अनुमोदन के बिना नहीं लेना – उसकी चोरी नहीं करना;

4 **अपरिग्रह** – अर्थात् अपनी आवश्यकता से अधिक परिग्रह का संचयन न करना; इसको शौच भी कहते हैं जिसका तात्पर्य है – लोभ न करना; और

5 **ब्रह्मचर्य** – अर्थात् मर्यादित जीवन शैली को अपनाना ताकि समाज में दुर्व्यवस्था न फैले।

ब्राह्मण : इनसे कर्तृत्व बोध का निषेध कहां होता है! तो भी हम मान लेते हैं कि समाज व्यवस्था के लिए ये उपयोगी हैं। हम कर्तृत्व की अवधारणा से अपने को अलग नहीं कर सकते। इसकी हमने विष्णु के दश अवतारों में कल्पना की है। इनमें बुद्ध को हमने सम्मिलित कर लिया है क्योंकि शूद्र वर्ग में बौद्ध विचारधारा का प्रचार हो गया है और उस वर्ग की "घर वापसी" के लिए बुद्ध को भी विष्णु का अवतार स्वीकार कर लिया गया है। अरे श्रमणों! हमने तो एक कल्कि अवतार की भी अवधारणा की है ताकि हमें आगे विचार संघर्ष न करना पड़े।

श्रमण : साधु–साधु! आप भूत, वर्तमान से भविष्य तक पहुंच गये। मानव की पहचान के लिए आप आधुनिक युग के वैज्ञानिक चार्ल्स डारविन से भी कहीं पीछे–आगे हो गये। डारविन तो मानव के उद्‌भव–विकास के लिए वानर तक पहुंचा था। आप तो जलचर मत्स्य से – जलचर–थलचर कूर्म से – थलचर वराह से – पशु–मानव नृसिंह से बढ़ते–बढ़ते बाल–मानव वामन तक पहुंचे और उसके बाद मानव–रूपी परशुराम, राम, कृष्ण और बुद्ध से आपका मिलन हुआ, लेकिन अंततः अन्तिम कल्कि – कलियुग अर्थात् सृष्टि या दृश्य–लोक के अन्त में किस रूप में होगा इसका अनुमान कदाचित् नहीं कर सके।

ब्राह्मण : आज रोबट का युग है। **नमो नारायण** सब कुछ शून्य को समर्पित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। डिज़िटलाईज़ेशन का अर्थ

समझिए। हमारा कल्कि रोबटिक होगा और शून्य में शयन करेगा।

श्रमण : परन्तु शाश्वत् सत्य की ओर आपका ध्यान नहीं गया। श्रमण परम्परा में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं। इन तीर्थंकरों ने भोग–भूमि की प्रकृत दशा से कर्मभूमि की प्रशस्त दशा की ओर मानव को अग्रसरित किया। वैचारिक दृष्टि से यह स्थापना की गई कि प्राणी के सुख–दुख के लिए उसके स्वयं के कर्म ही आधार होते हैं, और अपने पुरुषार्थ से हर आत्मा स्वयमेव परमात्मा बन सकती है। परमात्मा से तात्पर्य उस अन्तिम श्रेयस अवस्था का है जो निराकार है और मात्र प्रकाश–पुंज है। उस अवस्था में पहुंचने पर उस आत्मा या जीव को पुनः संसार में भ्रमण नहीं करना होता है। वह संसार के आवागमन के चक्र से मुक्त हो जाता है। यह मुक्त अवस्था उसके द्वारा स्वयं उपार्जित है और इसमें किसी अन्य सत्ता की कृपा या श्रेय नहीं है।

ब्राह्मण : आपकी बात हमारे मस्तिष्क की ऊपरी सतह से फिसल जाती है। आपकी सोच है, हमें कुछ नहीं कहना है। तो भी हमने विष्णु के चौबीस अवतार आपके चौबीस तीर्थंकरों के समक्ष खड़े कर दिये हैं और यह भी सुनिए, उनमें हमने आपके प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव को भी बीच में दाखिल कर दिया है।

श्रमण : महावीर से आपको क्या आपत्ति है जबकि उनके समकालीन बुद्ध को आपने अवतार की माला पहना दी है।

ब्राह्मण : बुद्ध अकेले थे और उनके अनुयायियों ने उन्हें एक–बुद्ध से सहस्र–बुद्ध बना दिया। उनको हम अकेला नहीं छोड़ सकते इसलिए क्योंकि आज भी बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर को, जो अपने जीवन के अंतिम दिनों में बुद्ध भगवान की शरण में चले गये थे, बोधिसत्व के रूप में हमने स्वीकार कर लिया है तथा दलित वर्ग में उनके नाम के प्रभाव को देखते हुए बाबा साहब के नाम से पंचतीर्थ के निर्माण करने का हमारा संकल्प है।

श्रमण : महावीर के विषय में आप क्यों मौन हैं?

ब्राह्मण : यह विचारणीय है कि दिगम्बर परम्परा में महावीर केवल ध्वनि करते हैं और उसका अर्थ–बोध वेद–निष्ठ ब्राह्मण गौतम

गणधर करते हैं। श्वेताम्बर परम्परा में महावीर ब्राह्मण ऋषभदत्त द्वारा अपनी ब्राह्मणी पत्नी नन्दा की कुक्षि में गर्भ धारण करते हैं, अतः वे मूलतः ब्राह्मण ही हुए; क्षत्रिय त्रिशला की कोख में उनका प्रत्यार्पण उनके मूल को समाप्त नहीं कर सकता। इसलिए हम तो महावीर को अपनी ही परम्परा का प्रतिनिधि मान लेते हैं।

श्रमण : महावीर के व्यक्तित्व का इस प्रकार विलोपन किया जाना ब्राह्मणीय साम्प्रादायिक विरोध का एक उदाहरण है। आप सदा से ही भौतिक लाभ की कामना से प्रभावित रहे हैं। अतः जो कुछ आप कर रहें है वह आपकी प्रकृति के अनुरूप है तथापि हम आपको बताना चाहेंगे कि हमारी परम्परा में तिरेसठ शलाका पुरुष मान्य हैं और उनमें राम, कृष्ण और रावण भी शामिल हैं।

ब्राह्मण : तोबा–तोबा! आपने रावण को भी शलाका पुरुष मान लिया। तो भी कोई बात नहीं। हमने तो तैंतीस करोड़ देवी–देवता माने हुए हैं जिनके नाम भी गिनाना आसान नहीं है।

ब्राह्मणों ने अपने बहुमत का लाभ उठाते हुए **नमो नारायण–नमो नारायण** का उद्घोष प्रारम्भ किया और अपनी बात को उसी प्रकार मनवाने का सफल प्रयास किया जैसा कि भारतीय संसद के बजट सत्र में **गुड्स एण्ड सर्विसेज़ टैक्स ऐक्ट** को एक वित्तीय विधेयक के रूप में पारित करा लिया गया था।

नमो नारायण ने संवाद को आगे न बढ़ाने का निर्देश दिया। प्रचलित संसदीय परम्परा के अनुरूप सभा की कार्यवाही सम्प्रति स्थगित कर दी गई।

बैठक समाप्त होने पर दोनों पक्षों ने एक दूसरे का अभिवादन किया– ब्राह्मणों ने **नमो नारायण** कहकर और श्रमणों ने **नमो अर्हताय** कहकर।

जैन समाज की वर्तमान स्थिति और हमारा कर्तव्य

– डॉ. अनिल कुमार जैन

जैन धर्म के अनुयायियों की संख्या दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है, यह जैनों के लिए चिन्ता का विषय होना चाहिए। सरकारी आंकड़ों के आधार पर सन् 2011 में जैनों की जनसंख्या मात्र 44 लाख ही थी। कुछ जैन हिन्दू–संगठनों के बहकावे में आकर खुद को जैन कहलवाने के बजाय हिन्दू कहलवाने में गौरवान्वित महसूस करते हैं तथा हिन्दू/वैष्णव देवी–देवताओं की भी आराधना करने लगे हैं। यह तो और अधिक चिन्ताजनक स्थिति है क्योंकि ऐसे जैन स्वयं जैन–धर्म की जड़े खोदने में लगे हुये हैं। कुछ साधु संत भी जैनों को हिन्दू ही मानने लगे हैं, यह बहुत ही दु:ख की बात है।

आज की यह आवश्यकता है कि जितने भी जैन बचे हैं वे सब एकजुट हों, कम से कम अजैनों के लिए तो एकजुट हों ही। कौन श्वेताम्बर है, या कौन दिगम्बर है, या कौन बीसपंथी है, या कौन तेरहपंथी है, यह हम आपस में निर्णय करते रहेंगे। इसके बावजूद भी हमें एकता का परिचय देना होगा। जहां–जहां मुकदमे चल रहे हैं, चाहे श्वेताम्बर या दिगम्बर के बीच हों या चाहे तेरहपंथ और बीसपंथ के बीच हों, इन्हें अविलम्ब समाप्त कर देना चाहिए। ऐसा न हो कि हम लोगों के आपसी झगड़े के कारण कोई तीसरा हमारे तीर्थों को हड़प ले। दो पक्षों में जो भी मुकदमे में सरैण्डर करेगा, मेरी दृष्टि में वह हारा नहीं है बल्कि बड़े दिलवाला है और जैन तीर्थ बचाने के लिए आगे आया है। मेरी दृष्टि में वह अधिक सम्मान का हकदार है।

नित नये तीर्थों का निर्माण हो रहा है, अच्छी बात है, लेकिन इनका निर्माण हमारे पुराने तीर्थों की कीमत पर नहीं होना चाहिए। हमारी जनशक्ति तो सीमित है ही, धनशक्ति भी सीमित है। अत: इस बात को ध्यान में रखकर ही नये तीर्थों का निर्माण होना चाहिए। पुराने तीर्थ हमारी संस्कृति और श्रद्धा के प्रतीक हैं, अत: पहले पुराने तीर्थों की रक्षा के बारे में सोचें, बाद में नये तीर्थों का निर्माण हो।

जब तक जैन धर्म के मानने वाले रहेंगे तथा जब तक हमारी संस्कृति और श्रद्धा के प्रतीक हमारे प्राचीन तीर्थ सुरक्षित रहेंगे तभी तक जैन धर्म भी रहेगा। यदि जैन धर्म मानने वाले ही नहीं बचेंगे तो जैन धर्म कैसे बचेगा। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर निम्न बिन्दुओं की ओर मैं जैन समाज व जैन संतों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। और भी अनेक बिन्दु हो सकते हैं। हम सभी जैन संगठित हों तो शायद हम जैन

धर्म का और अधिक प्रचार कर सकते हैं। जैन धर्म की यह एक सच्ची सेवा होगी।

1 कसार : इन्हें अजैन होने से बचा लें

पिछली जनगणना के आधार पर जैनों की सबसे अधिक जनसंख्या महाराष्ट्र में है। साथ ही यह भी सही है कि सबसे अधिक गरीब व पिछड़े जैन भी इसी राज्य में हैं। यहां की अति–गरीब जैन जातियों में कसार, चतुर्थ, पंचम, व श्रीमाल हैं। श्रीमाल जाति के लोगों की जनसंख्या लगभग दस हजार है। कसार जाति के जैन लोगों की जनसंख्या पहले 80,000 (अस्सी हजार) थी, लेकिन वर्तमान में कसार–जैन लगभग 20 हजार ही रह गये हैं। जहां तक इनके व्यवसाय की बात है, इनमें से अधिकतर दिहाड़ी मजदूरी करते हैं। नांदेड के डॉ. शरदचन्द्र जी ने बताया कि चतुर्थ व पंचम की स्थिति अपेक्षाकृत ठीक है। इन जातियों के लोग खेत–मजदूरी करते हैं, इससे इनका काम चल जाता है। लेकिन कसार जाति के लोगों की स्थिति इतनी भी अच्छी नहीं है। ये लोग हाथलारी में या सिर पर रखकर बर्तन बेचते हैं, कुछ लोग चूड़ी बेचने का काम करते हैं। इनकी गरीबी का लाभ उठाकर कुछ हिन्दू संगठनों ने इन्हें अपनी ओर आकर्षित किया, कुछ आर्थिक मदद भी की और इन्हें वैष्णव बना लिया गया है। जो कसार अब भी जैन हैं इन्हें निरन्तर वैष्णव बनने के लिए लुभाया जाता है। चूंकि कसार–वैष्णव पहले से कुछ अच्छी स्थिति में हो गये है, अतः कसार–जैनों का इस ओर आकर्षित होना स्वाभाविक है।

डॉ. शरदचन्द्र जी ने बताया कि कुछ जैन कसारों ने अब छोटा–मोटा निजी व्यवसाय–दुकान आदि करना शुरू कर दिया है, ये लोग मिलकर कसार–जैनों के लिए कुछ–कुछ करते रहे हैं लेकिन वह काफी नहीं है। यदि भारतवर्ष की जैन समाज ने कसार–जैनों की ओर ध्यान नहीं दिया तो कुछ समय बाद इन बचे हुये जैनों का वैष्णव बनना तय है।

हम जैन संतों के नेतृत्व में प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये धार्मिक आयोजनों व भवन निर्माणों पर खर्च करते हैं, वह भी प्रभावना के नाम पर। क्या कोई संत महात्मा कसार जैसी जातियों के उत्थान करने के लिए जैन धर्मात्माओं को प्रेरित करेगा? क्या इनके स्थितिकरण के लिए कोई आगे आयेगा?

2 नवरात्रि महोत्सव और जैन

नवरात्रि महोत्सव पूरे देश में जोर–शोर से चल रहा है। मां अम्बे और मां दुर्गा की मूर्तियां जगह–जगह स्थापित की गई हैं। गरबा डांस की धूम है। नव–युवक तथा नव–युवतियां रंग–बिरंगे कपड़ों में सजे–धजे इन कार्यक्रमों को और अधिक मनमोहक बना देते हैं। इस चकाचौंध में हमारे

जैन युवक–युवतियां भी आकर्षित हुए बिना नहीं रहते हैं तथा वे भी पूरे जोर–शोर से इनमें हिस्सा लेते हैं। यदि प्रतिभागी की तरह किसी प्रतियोगिता में हिस्सा लेते हैं, वहां तक तो ठीक है, लेकिन नवरात्रि में देवी–देवताओं की आराधना, उनके नाम पर उपवास तथा शुभकामना संदेश आदि एक–दूसरे को भेजना उचित नही है। अधिक अफसोस तो तब होता है जब कुछ जैन संत भी नवरात्रि पर्व मनाने की सलाह दे देते हैं।

3 उदयगिरि–खण्डगिरि : इन्हें बचा लो

उड़ीसा की राजधानी भुवनेश्वर के निकट उदयगिरि–खण्डगिरि के नाम से प्रसिद्ध एक अति प्राचीन जैन तीर्थ है। इस क्षेत्र का जैन धर्म से सम्बन्ध कलिंग नरेश खारवेल से पहले का है। यहां की हाथीगुम्फा में णमोकार मन्त्र के दो पद लिखे हुए हैं। यहां का कुछ हिस्सा पुरातत्व विभाग के अधीन है। कई हिस्सों में हिन्दू साधुओं ने कब्जा कर रखा है। मैं यहां लगभग दो वर्ष पूर्व गया था। यहां की प्रायः सभी गुफाओं में जैन तीर्थंकरों की मूर्तियां हैं। मैं यह देखकर हैरान रह गया कि एक गुफा पर तो हिन्दुओं ने पूरा कब्जा कर रखा है – तीर्थंकर मूर्ति को देवी का रूप दे दिया गया है। अन्य गुफाओं में भी तीर्थंकर मूर्तियां हैं। इन गुफाओं में से कई को हिन्दू साधुओं ने अपनी धर्मशाला बना लिया है। यहां जैनों की संख्या बहुत कम है। अतः इन तीर्थों की रक्षा का दायित्व किसी राष्ट्रीय नेतृत्व को लेना होगा। मैंने यह महसूस किया कि यहां की स्थिति इस प्रकार से नहीं बिगड़ी है जिस प्रकार गिरनार की बिगड़ गई है। यहाँ अपेक्षाकृत गरीबी भी बहुत है। यदि यहाँ के पण्डों को कुछ धन दे दिया जाये तो वे इस क्षेत्र को खाली भी कर सकते हैं। मेरे हिसाब से अभी स्थिति को नियन्त्रण में लिया जा सकता है। हम सभी को इस तीर्थ को बचाने के लिए यथायोग्य प्रयास करना चाहिए। ध्यान रहे यह तीर्थ ईसा पूर्व का है तथा यह ही एक मात्र प्राचीनतम स्थल है जहां णमोकार मन्त्र का शिलालेख है।

4 टी.वी. पर आपसी विरोध के स्वर

जब से टेलीविजन का जमाना आया है एक क्रांति सी आ गई है। जहां एक ओर इसके कई लाभ हैं, वहीं कुछ हानि भी हैं। जैन प्रोग्रामों का लाभ घर बैठे मिल जाता है। जैन संतों की वाणी सुनने को मिल जाती है। धर्म की बहुत प्रभावना होती है लेकिन लाइव प्रोग्राम में एक दिक्कत यह रहती है कि उसे एडिट नहीं किया जा सकता है। जो कुछ बोला जाता है, तुरन्त प्रसारित हो जाता है।

हम सभी जानते है कि जैन धर्म में अनेकों सम्प्रदाय हैं। प्रत्येक की अपनी–अपनी मान्यताएं हैं। आपस में कई सैद्धान्तिक विरोध भी हैं। मेरा निवेदन संत समुदाय से है कि वे कृपया लाइव टेलीकास्ट में कुछ भी ऐसा न बोलें जिससे अजैनों के बीच यह संदेश जाये कि जैन आपस में लड़ते रहते हैं, और फिर वे इस बात का फायदा उठाकर हमारे तीर्थों को हथियाने लगें। हमारे आपस में कितने भी सैद्धान्तिक मतभेद हों, पब्लिक में, अजैनों के बीच तो हम एक दिखें। यदि हम ऐसा नहीं करते हैं तो निश्चित ही जैन धर्म का बहुत बड़ा नुकसान हो जायेगा। यह ध्यान रखें कि कहीं प्रभावना की जगह अप्रभावना न हो जाये। विरोधी स्वरों के कारण युवा जैनों में भी धर्म के प्रति अरुचि होने लगती है। वे सोचते हैं कि टी.वी. पर या तो संत एक दूसरे की बुराई करते रहते हैं या फिर क्रियाकांड दिखाया जाता है।

5 चुनावी मौसम

2019 में लोक सभा के चुनाव होने वाले हैं। इसी वर्ष कुछ राज्यों के चुनाव भी आने वाले हैं। अतः आमजन का लुभाने के लिए सभी पार्टियों के नेता व उम्मीदवार हमारे संतों के चक्कर लगाने लगेंगे। हमारे संत भी आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए जो नेता आये उनसे एक प्रश्न अवश्य पूछें कि हम जैनों के हित में उन्होंने अब तक क्या किया है और आगे क्या करने की योजना है। क्या ये नेता लिखित में देंगे कि वे गिरनार और शिखर जी को अजैनों से मुक्त करवाएंगे? शाकाहार के सत्प्रचार के लिए उनके पास क्या योजना है?

प्रायः देखा गया है कि जब भी चुनाव आते हैं एक नया कत्लखाना खुलने की घोषण हो जाती है। अभी हाल में WhatsApp पर एक पेपर की कटिंग देखी थी। उसके अनुसार भोपाल में एक कत्लखाना प्रस्तावित है। इससे पहले एक कत्लखाना चित्तौड़गढ़ में खुलने की बात भी थी। मांस निर्यात दिन–प्रतिदिन यूं ही नहीं बढ़ रहा है। उसके लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम हैं, ऐसा प्रतीत होता है।

जैन बचेंगे, जैन तीर्थ बचेंगे, तभी जैन धर्म भी सुरक्षित रहेगा। उचित कार्यवाही के लिए शीघ्रता करें, कहीं देर न हो जाये।

फ्लैट नं. 401, प्रामिनेन्स अपार्टमेंट्स, डी–197, मोदी पार्क के सामने, मोती मार्ग, बापू नगर, जयपुर–302015

✧✧✧

जैन धर्म व जैन समाज की छवि खराब करने में दिगम्बर जैन साधुओं का हाथ

— वैद्य राजेश चन्द्र जैन

अहमदाबाद से प्रकाशित साप्ताहिक पत्र **'जिनेन्दु'** के 24 जून 2018 के अंक के प्रथम पृष्ठ पर उल्लेख है कि कोलकाता के डवसन रोड के जैन मन्दिर में दिगम्बर जैन मुनि प्रतीक सागर महाराज 3 माह से रह रहे थे, उनके गलत आचरण व क्रिया–कलापों को देख मुनि संघ व्यवस्था समिति के पदाधिकारियों ने उन्हें कपड़े पहनाने का निर्णय लिया। बिना बुलाए महाराज कोलकाता आए थे, तथापि समाज व मुनि संघ व्यवस्था समिति ने उनका अभिनन्दन किया। नियमों के विपरीत दिनचर्या पाए जाने पर उनको कोलकाता से रवाना कर दिया गया। कई दिनों से समाज के लोग उन्हें समझा रहे थे तथापि उनके आचरण में सुधार नहीं हुआ। ऐसा कहना मेरा नहीं है, यह कथन है कोलकाता मुनि संघ समिति के मन्त्री श्री दयाचन्द जैन का।

इसी तरह अम्बाला कैण्ट में एक और संत अनुज सागर को दुष्कर्म और चरित्रहीनता के आरोप के दौरान स्थानीय समाज के लोगों ने वस्त्र पहना कर रवाना कर दिया।

अगस्त 2018 के प्रथम सप्ताह में जैन मुनि नयन सागर महाराज की चरित्रहीनता की हरकतें इंडिया टी.वी. चैनल पर दिखाई गई।

ऐसे एक नहीं सैकड़ों जैन साधुओं पर चरित्रहीनता के दोष लगे हैं लेकिन जैन मुनि अपमानित होने के बाद भी सुधर नहीं रहे हैं। यह सब अन्ध भक्त जैन श्रावकों व जैन विद्वानों का दोष है। जैन विद्वानों को सब कुछ सच्ची जानकारी होने पर भी वे चुप्पी साधे बैठे हैं, कारण जैन साधुओं से उनका स्वार्थ है। जैन साधुओं के गुणगान करने से उनको सम्मान व यश मिलता रहता है। अपनी जैन विद्वत्ता की प्रसिद्धि मिलती रहती हे। श्री भरत कुमार काला व श्री निर्मल कुमार जी सेठी का लखनऊ से प्रकाशित **जैन गजट** पत्र जैन साधुओं की वजह से चल रहा है। वे जैन दिगम्बर साधुओं के अशोभनीय कृत्य पर कोई टिप्पणी नहीं करते हैं। ये लोग नग्नत्व की पूजा करते हैं। योग्य, गुणवान, आगम का ज्ञान रखने वाले जैन साधुओं की प्रशंसा करें तो मुझे कोई दुख नहीं है। समाज में ऐसी धारणा

बन गई है कि जो व्यक्ति नग्न दिगम्बर जैन साधु है वह पूजनीय है चाहे उस साधु को जैन धर्म का बिल्कुल ज्ञान न हो। अगर ऐसी ही भावना है तो कुत्ते, गाय, भैंस भी नग्न रहते हैं, उन्हें भी पूजें। नग्नता की नहीं, गुणों की पूजा होनी चाहिए।

मेरी राय है जो जैन साधु मोबाइल रखते हैं, टोटके, तंत्र–मंत्र, आदि करते हैं, ऐसे साधुओं को न पूजें और न ही आहार दें। अकेली महिला को दिन में या रात में मुनि के पास जाने पर पाबन्दी हो, एकल बिहारी के साथ महिला त्यागी हो तो उन्हें रुकने न दें। मेरा भारत की जैन समाज से निवेदन है कि भ्रष्ट, चरित्रहीन व परिग्रही जैन साधुओं के गलत कारनामें देखकर उनके विरुद्ध आपराधिक कानून के अन्तर्गत कार्यवाही की जाये। अगर चार–छह जैन दिगम्बर साधु, संत आशाराम, राम–रहीम, हनीप्रीत, रामपाल जैसे संतों की तरह जेल में बन्द होंगे तो जो नए साधु बन रहे हैं उनके चरित्र में गिरावट नहीं आएगी और अजैन समाज की नजर में जैन समाज व जैन धर्म का सम्मान बना रहेगा।

अनेकान्त फार्मा,
अलीगंज–207247 (जिला एटा)

✧✧✧

इतिहास और संस्कृति के संरक्षण हेतु पाठ्य पुस्तकों में सुधार की अपेक्षा

— डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल

किसी भी धर्म या संस्कृति का स्थायित्व इस बात पर निर्भर करता है कि जन मानस और इतिहास में उस संस्कृति व धर्म के मौलिक सिद्धांतों एवं विशिष्ट महापुरुषों के सम्बन्ध में जानकारी सही है या गलत और भ्रामक है। यदि जानकारी यथार्थ और सही है तब संस्कृति का प्रवाह सही व यथार्थ रूप से होता रहेगा। यदि जानकारी गलत, अयथार्थ या भ्रामक है तो उस संस्कृति का प्रवाह विकृत होकर जन–भ्रम उत्पन्न करेगा। जैन धर्म और संस्कृति के सम्बन्ध में कुछ ऐसा ही हुआ।

दिनांक 21 अक्टूबर 1973 को मेरठ में श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद की प्रबन्धकारिणी की बैठक में पाठ्य पुस्तकों में संशोधन और सुधार हेतु केन्द्रीय और प्रान्तीय शिक्षा मंत्रालयों से मांग की गयी थी। प्रस्तावक थे – श्री भगत राम जी (दिल्ली) और अनुमोदक थे – पं. बाबूलाल जी जैन जमादार। इसी क्रम में 19–20 नवम्बर 1978 को भिण्ड में आयोजित "शीतल जन्म शताब्दी अधिवेशन" में राजस्थान और उत्तर प्रदेश की पाठ्य पुस्तकों में सुधार हेतु क्रमशः श्री तेज करण डांडिया और श्री रिखब राम सिंहल के संयोजकत्व में दो समितियां गठित की गईं। वर्ष 1992 में भोपाल में आयोजित परिषद के राष्ट्रीय अधिवेशन में नव निर्वाचित अध्यक्ष साहू रमेश चन्द्र जैन ने अपनी प्राथमिकताओं में पाठ्य पुस्तकों में सुधार करवाने की भावना व्यक्त की, किन्तु सार्थक प्रयासों के अभाव में स्थिति ज्यों कि त्यों बनी रही।

एन.सी.ई.आर.टी. के पाठ्यक्रम में भ0 महावीर के एवं जैन धर्म के सम्बन्ध में यथार्थ जानकारी की बात आर्यिका गणिनी ज्ञानमती माता जी को भी ज्ञात हुई। सन् 1995 में उनकी प्रेरणा से हस्तिनापुर में 'भ0 ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन' का आयोजन किया गया। इसी क्रम में जून 2000 में 'जैन धर्म की प्राचीनता' विषय पर इतिहासकारों का सम्मेलन हुआ जिसमें एन.सी.ई.आर.टी. को जैन धर्म सम्बन्धी भ्रांतियों के सुधार हेतु दिशा निर्देश व अनुरोध किया गया। तत्कालीन प्रधानमंत्री, श्री अटल बिहारी बाजपेई, तथा मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी से

पाठ्य पुस्तकों में सुधार हेतु प्रत्यक्ष वार्ता द्वारा शिक्षा जगत तक यह संदेश पहुंचाया गया और दस वर्षों के अथक प्रयास द्वारा पाठ्य पुस्तकों में संशोधन का क्रम प्रारम्भ हो सकने की घोषणा की गयी।

आश्चर्य का विषय है कि हस्तिनापुर संस्थान और गणिनी प्रमुख द्वारा पाठ्यक्रम संशोधित करवाने की बात के बाद भी कोई संशोधन नहीं हुआ। 'न तो भ0 महावीर जैन धर्म के संस्थापक हैं', इस भ्रान्ति का संशोधन हुआ और न ही 'भ0 महावीर की कथित जन्म भूमि कुण्डलपुर – नालन्दा है' यह निर्भ्रान्ति सिद्ध हुई। समाज की गाढ़ी कमाई का करोड़ों रुपया व्यय हुआ, किन्तु इतिहास–भूगोल नहीं बदले। संस्कृति रक्षक भट्टारक जी एवं शिक्षा जगत के विद्वानों का ध्यान भी पाठ्य पुस्तकों में सुधार की ओर नहीं गया।

पाठ्य पुस्तकों का निर्माण राज्य सरकारों के शिक्षा विभाग के अंतर्गत स्थापित विशेषज्ञ समितियों तथा राष्ट्रीय स्तर पर एन.सी.ई.आर.टी. दिल्ली, द्वारा किया जाता है। सी.बी.एस.ई. और आई.सी.एस.ई. द्वारा निर्धारित सिलेबस के आधार पर अनेक प्रकाशकों द्वारा पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं। इन पाठ्य पुस्तकों में जैन धर्म, बौद्ध धर्म, वैदिक धर्म आदि के बारे में जानकारी दी जाती है।

पाठ्य पुस्तकों में धर्म के नाम पर दी जाने वाली शिक्षा के विषय में सामान्यतः अभिभावकों की कोई रुचि नहीं रहती। मेरी भी यही स्थिति थी। किन्तु जब किसी कार्य होने की काल–लब्धि आती है तब अनुकूल निमित्त भी उपस्थित हो जाते हैं। मेरे तीन पुत्र भिन्न–भिन्न विद्यालयों में पढ़ रहे थे। इनकी उक्त कक्षाओं की सामाजिक विज्ञान की पाठ्य पुस्तकों में जब–जब जहां–जहां जैन धर्म और भ0 महावीर के बारे में अयथार्थ और भ्रमपूर्ण कथन आये, उन्होंने मेरा ध्यान आकर्षित किया और तदनुसार एक–एक पाठ्य पुस्तक के सुधार हेतु मैंने प्रयास किये। इसके फलस्वरूप 6 पाठ्य पुस्तकों में सुधार करवाना सम्भव हुआ। फ्रैंक ब्रदर्स एण्ड कं. तथा मार्निंग स्टार के समक्ष सुधार हेतु प्रकरण अभी लम्बित है। पाठ्य पुस्तक में सुधार का प्रकरण मार्गदर्शन हेतु प्रस्तुत है।

1 चि. आदीश कान्वेंट स्कूल की कक्षा 6 में पढ़ता था। उसने वर्ष 2009 में बताया कि मेरी समाज विज्ञान की पुस्तक में भ0 महावीर को जैन धर्म का संस्थापक बताया गया है। मैंने पुस्तक को देखा तो ज्ञात हुआ कि सी.बी.एस.

ई. कोर्स की होली फेक इण्टरनेशनल (प्रा.) लि., दिल्ली, द्वारा प्रकाशित पुस्तक में भ0 महावीर को जैन धर्म का संस्थापक एवं अन्य भ्रमपूर्ण अयथार्थ जानकारी दी गई है। इसकी जानकारी मैंने श्री बलवन्त राय को दी। उन्होंने सुझाव दिया कि इसे शुद्ध करावें। तद्नुसार मैंने दिनांक 23–4–2009 को होली फेक के सम्पादक को शुद्धिकरण हेतु पत्र लिखा। प्रति–उत्तर में डॉ. मुखर्जी ने अपने पक्ष की पुष्टि हेतु तर्क दिये और प्रकाशित कथनों की पुष्टि हेतु देशी–विदेशी लेखकों के संदर्भों की छाया प्रतियां भेजी। अब मेरे समक्ष उनके तथ्यों को नकारने और अपने तथ्यों की पुष्टि की समस्या थी। इस सम्बन्ध में पूज्य आचार्य विद्यानन्द जी मुनिराज और पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का मार्गदर्शन प्राप्त किया। शुद्धिकरण हेतु ऐसे प्रमाणों की आवश्यकता समझी गयी जो जैनेतर लेखकों के हों। आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने यह भी सुझाव दिया कि यथास्थान चन्दगुप्त मौर्य का उल्लेख भी पाठ्य पुस्तक में आना चाहिए। जैन धर्म स्वीकारने के कारण इतिहासकारों ने चन्द्रगुप्त मौर्य की उपेक्षा की है।

संदर्भ पुस्तकों की खोज के प्रयासों में संयोग से श्री बलवन्त राय के निजी पुस्तकालय में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन द्वारा सम्पादित 'कल्चरल हेरिटेज आफ इण्डिया', खण्ड–1, मिल गया। उसमें हमारे उपयोग की सामग्री मिल गयी। कुन्दकन्द भारती ट्रस्ट, दिल्ली, में श्री रामधारीसिंह दिनकर की 'संस्कृति के चार अध्याय' पुस्तक मिली तथा इन्दौर म्युजियम में डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी कृत 'हिन्दु सभ्यता' पुस्तक मिली। इनसे संदर्भों की छायाप्रति करवायी। इन संदर्भों से हमारा काम सहज हुआ। जैन ग्रन्थों के संदर्भ तो बहुत मिले। 'संविधान' के संदर्भ भी उपयोगी सिद्ध हुए। इन सब ग्रन्थों के संदर्भों की छाया प्रतियां भेज कर हमने सम्पादक, 'होली फेक', से अनुरोध किया कि इनके आधार पर पाठ्य पुस्तक में वांछित सुधार करें। सम्पादक जी से फोन पर भी चर्चा की। निरन्तर सम्पर्क और ध्यानाकर्षण के फलस्वरूप सम्पादक जी ने हमें आश्वस्त किया कि वे अगले संस्करण में आवश्यक संशोधन करेंगे। पुस्तक का नया संस्करण 2010 में प्रकाशित हुआ जिसमें भ0 महावीर को जैन धर्म का चौबीसवां तीर्थंकर बताया गया तथा यह भी कि उन्होंने कठोर तपस्या और आत्म ध्यान किया और उनका परिनिर्वाण हुआ, आदि सुधार किये गये।

2 फ्रैंक एजुकेशनल (प्रा.) लि. द्वारा प्रकाशित 'सामाजिक अध्ययन' कक्षा 4 की पुस्तक में भ0 महावीर को संस्थापक बताया गया। 'संस्थापक शब्द' के लोप हेतु हमने दिनांक 4–10–2012 को पत्र लिखा। तद्नुसार अगले संस्करण में सुधार हुआ।

3 मधुवन एजुकेशनल बुक्स, नोयडा, द्वारा आई.सी.एस.ई. कोर्स की हिस्ट्री और सिविक्स कक्षा 6 की पुस्तक में सुधार हेतु दिनांक 12–8–12 को ससंदर्भ पत्र लिखा। पत्राचार एवं निजी सम्पर्क से सन् 2013 की पुस्तक में इच्छित संशोधन हुआ।

4 ऑक्सफोर्ड युनीवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, द्वारा प्रकाशित कक्षा 6 की पुस्तक 'हिस्ट्री' एण्ड 'सिविक्स' में सुधार हेतु दिनांक 4–6–13 को ससंदर्भ पत्र लिखा। सम्पर्क किया, तद्नुसार वर्ष 2015 में प्रकाशित पुस्तक में सुधार हुआ।

5 कोरडोवा पब्लिकेशन (प्रा.) लि., नई दिल्ली, की कक्षा 6 की समाज विज्ञान पुस्तक में सुधार हेतु ससंदर्भ पत्र दिनांक 22–10–15 का अद्भुत प्रभाव हुआ। सुझावों के अनुरूप सम्पादक महोदय ने वर्ष 2016 के संस्करण में भ0 ऋषभदेव को जैन धर्म का संस्थापक, भ0 पार्श्वनाथ को 23वां और भ0 महावीर को 24वां तीर्थंकर दर्शाकर जैन धर्म की प्राचीनता प्रकाशित की। साथ ही, भ0 महावीर का सम्पूर्ण यथार्थ विवरण प्रकाशित कर हमारे हृदय को जीत लिया। इतना ही नहीं, भ0 महावीर की अहिंसा के महत्व को दर्शाने के लिए 'वण्डरफुल टु नो' में निम्न गरिमामय संदेश विद्यार्थियों को दिया – Mahatma Gandhi based India's struggle for freedom on the basic principle of Ahinsa or non-violence as prescribed by Vardhaman Mahavira.

6 NCERT (केन्द्रीय संस्थान) द्वारा प्रकाशित कक्षा 6 की इतिहास की पुस्तक में भ0 महावीर को 'थिंकर' (विचारक), 12 वर्ष एकाकी और कठोर जीवन, जंगल जाना, बौद्ध और जैन संघ की व्यवस्था को एक जैसा बताया गया है। इसमें सुधार हेतु दिनांक 5–5–13 को विस्तृत पत्र लिखा। पत्र दिनांक 29–3–14 एवं 1–11–14 द्वारा सुझाव व स्मरण पत्र भेजे। निरन्तर सम्पर्क किया। अपराध विधि के प्रावधानों को भी स्मरण कराया। अंततः वर्ष 2016 में प्रकाशित पुस्तक में 'थिंकर' के स्थान पर 'जैन धर्म का अंतिम और 24वां तीर्थंकर' लिखवाने में सफलता मिली। शेष संशोधन पाठ्य पुस्तक निर्माण के अगले चरण में किये जाने का आश्वासन पत्र दिनांक 17–3–16 में दिया गया। इसके पहले श्री खिल्लीमल अधिवक्ता द्वारा प्रभावी प्रयास

किये गये थे जो उच्चतम न्यायालय के अनुकूल निर्णय के बाद भी दुराग्रह के कारण कार्यान्वित नहीं हो सके थे।

कक्षा 9 की पाठ्य पुस्तकों में जैन दर्शन की मूल–मान्यताओं का प्रकाशन हो सकता है। पाठ्य पुस्तकों के सुधार के कठिन श्रम साध्य कार्य में सहयोगी और प्रेरक, मार्गदर्शक और आशीर्वाद दाताओं को सादर नमन के साथ दिगम्बर जैन संस्कृति को श्रद्धा सुमन अर्पित हैं।

कालेज कालोनी, एम.सी डी.वार्ड नं 1/268, बुढार (जि. शहडोल)–484110

(टिप्पणी : डॉ. बंसल द्वारा कक्षा 6 की पाठ्य पुस्तकों में सुधार के लिए जो प्रयत्न किये गये, उनका उल्लेख उनके प्रस्तुत लेख में है। इसके लिए हमारा भी उन्हें साधुवाद है।

हमें विस्मय इस बात से हुआ कि *शोधादर्श* डॉ. बंसल को नियमित रूप से भेजा जाता है परन्तु उन्होंने *शोधादर्श 34* – मार्च 1998 – में हमारे Jainism पर प्रकाशित आलेख का संज्ञान नहीं लिया। उसमें NCERT द्वारा प्रकाशित कक्षा 11 के लिए निर्धारित इतिहास विषय की पाठ्य पुस्तक के सम्बन्ध में उसके लेखक प्रो. राम शरण शर्मा से पत्राचार का विवरण दिया गया है और जैन धर्म के विषय पर हमारे द्वारा प्रस्तावित परिष्कृत आलेख भी दिया गया है। हमारा यह पत्राचार 1996 में हुआ था। हमारा उक्त आलेख आज भी उतना ही प्रासंगिक है। NCERT की पाठ्य पुस्तकें अंग्रेजी में प्रकाशित होती हैं क्योंकि उक्त शिक्षा संस्थान का माध्यम अंग्रेजी भाषा है। *शोधादर्श* में प्रकाशित हमारा लेख भी Jainism पर अंग्रेजी में है।

यदि सम्भव हो तो डॉ. बंसल NCERT द्वारा 1996 के बाद प्रकाशित कक्षा–11 एवं अन्य उच्चतर अध्ययन की पाठ्य पुस्तकों को देखने का कष्ट करें कि प्रो. भार्मा द्वारा अपनी अन्य पुस्तकों में उक्त लेख का अथवा उसमें इंगित सामग्री का उपयोग किया गया है या नहीं।

तीर्थंकर महावीर के संदर्भ में भ्रान्ति प्रचारित करने का श्रेय आर्यिका ज्ञानमती जी को भी जाता है जिन्होंने अपने स्वार्थ के लिए भ0 महावीर का जन्मस्थल ही बदल दिया और उसके लिए उन्होंने कभी खेद भी प्रकट नहीं किया। कदाचित् आम्नाय से प्रतिबद्धता के कारण डॉ. बंसल ने उन्हें सम्बोधने में संकोच किया, यद्यपि उनके द्वारा हस्तिनापुर में 1995 में भ0 ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन के आयोजन का उल्लेख किया है। – डॉ. शशि कान्त)

✧ ✧ ✧

मानवीय करुणा महल के स्थायी स्तम्भ

– श्री अजित जैन 'जलज'

करुणा भाव के चलते ही क्रूर प्राणी भी अपने बच्चों का पालन पोषण कर पाते हैं, करुणा के ही कारण पशु पक्षियों में प्रेमभाव पनपता है। करुणा की गहनता के चलते ही पशु पक्षी भी मनुष्यों को बचाने में जुट जाते हैं और इसी करुणा की पराकाष्ठा के चलते एक गोमाता अनायास कुचले गये बालक की मौत पर प्रायश्चित कर अपने प्राण त्याग देती है।

यह सब सहज करुणा भाव है लेकिन मानवीय करुणा इससे बढ़कर एक कठिन जीवन साधना है। मानवीय संवेदना करुणा को एक मनोहर महल मानते हुये इसकी रचना को समझने का प्रयास करती है।

1 स्वागत द्वार : सत्वेशु मैत्रीं

सब जीवों से दोस्ती का भाव मानवीय करुणा महल का पहला स्थायी स्तम्भ है। यह एक शुभ शुरुआत है। एक मांसाहारी भी पशु पक्षियों से प्रेम एवं दोस्ती का भाव रख सकता है लेकिन कोई भी सच्चा दोस्त अपने मित्रों को खा नहीं सकता है इसलिये ऐसे सभी लोग बहुत जल्दी शाकाहारी हो जाते हैं।

मोहनदास गांधी की शुरुआत भी यहीं से हुई थी। उन्हें मांस में विशेष बुराई नहीं दिखती थी परन्तु मां के वचनों को निभाने के लिये वह लन्दन में शाकाहारी भोजन पाने के लिये भटकते रहे और आखिरकार कुछ ही समय में स्वयं शाकाहार के प्रमुख प्रचारक बन गये।

इसी प्रकार क्रोंच पक्षी का शिकार होने से आहत प्रेमी युगल की चीख ने महर्षि वाल्मीकि को करुणा का आदि कवि बनाकर उनसे **रामायण** जैसी कालजयी कृति की रचना कराई थी।

2 दूसरा स्तम्भ : गुणिषु प्रमोदं

बहुत से लोग पहले स्तम्भ में ही अटक कर रह जाते हैं और मानवीय करुणा के महल को धूल धूसरित कर देते हैं। हिटलर जैसे शाकाहारी तानाशाह ने दुनियां भर में लाखों लोगों को मरवा डाला था। अतएव अकेले शाकाहारी होने का गुण मानवीयता नहीं ला सकता है, उसके लिये गुणीजनों के प्रति प्रसन्नता व सम्मान का भाव रखना आवश्यक है।

गुण ग्राहकता का भाव ही व्यक्ति को उन्नति के पथ पर पहुंचाता है। माता–पिता एवं गुरुजनों के प्रति विनम्रता के भाव से ही व्यक्ति गुणवान एवं सफल बनता है। इसी गुणग्राहकता के चलते ही दुनिया भर के लोग अपने आराध्य देवता/भगवान को पूजते हैं।

3 दीन–दयालु कृपालु भज मन

स्वागत द्वार के दो स्तम्भों को पार करने पर मानवीय करुणा के राजप्रासाद के दर्शन होते हैं जिसमें तीसरा स्तम्भ दीन दुखी मनुष्यों के प्रति सहानुभूति का भाव भरा रहता है। सभी महापुरुष इसलिये करुणा–निधान कहलाते है क्योंकि उन सब में दीन दुखी मनुष्यों के प्रति विशेष अनुकम्पा की भावना रहती है – दूसरे शब्दों में, मनुष्य मात्र के प्रति करुणा का भाव ही उन्हें भगवान अथवा महापुरुष का स्वरूप प्रदान करता है।

दक्षिण अफ्रीका में वकील मोहनदास गांधी से अपने साथी मनुष्यों का दुख देखा नहीं गया और उनके प्रति सहानुभूति के भाव से ही उन्होंने सत्याग्रह को विकसित किया।

4 साधना का शिखर : माध्यस्थ भाव

मानवीय करुणा महल का चौथा एवं सबसे महत्वपूर्ण स्थायी स्तम्भ, दुश्मनों के प्रति भी वैरभाव का त्याग है। दुर्जन, दुष्ट, क्रूर, विपरीत बुद्धि वाले व्यक्तियों के प्रति भी हिंसा एवं घृणा का भाव नहीं रखना कठिनतम साधना है। इसी गुण के चलते ही वकील मोहनदास दक्षिण अफ्रीका में 'महात्मा गांधी' बन सके थे।

गांधी जी को अंग्रेजों से भी घृणा नहीं थी। इसाईयों के आदर्श प्रभु ईसामसीह तो स्वयं को सूली पर चढ़ाने वालों के प्रति भी कह चुके हैं कि "हे प्रभु, इन्हें क्षमा करना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं।"

यही भाव धीरे–धीरे महात्मा गांधी में भी भरता गया था। अफ्रीका के सत्याग्रह में गांधी जी पर हमला करने वालों को तुरन्त गिरफ्तार कर लिया गया था परन्तु महात्मा गांधी स्वयं उन्हें जेल से छुड़ा लाये थे। ऐसे सैकड़ों प्रसंगों, के चलते ही महात्मा गांधी की आत्मिक शक्तियां बलवती हो सकी थीं तथा वह अहिंसा के विश्वव्यापी प्रचारक बन सके थे जिनकी स्मृति में संयुक्त राष्ट्र संघ भी 2 अक्टूबर को अंतर्राष्ट्रीय **अहिंसा दिवस** मनाता है।

इस तरह से मानवीय करुणा महल को देखने से हमें भी दिव्यता का अनुभव होता है। आइये, इस मानवीय महल को रचने में हम सब भी जुट जायें। करुणा ही सभी धर्मों एवं मानवता की मिली जुली विरासत है, इसे हमें बचाना ही नहीं है, बल्कि आगे बढ़ाना भी है।

पारस होटल के पीछे, न्यू सिविल लाइन्स, टीकमगढ़–472001

✧✧✧

क्षमावाणी पर्व

– डॉ. सुनील जैन 'संचय'

भारत की प्राचीन श्रमण संस्कृति की अत्यन्त महत्वपूर्ण **जिन** परम्परा ने **क्षमा** को पर्व के रूप में प्रचलित किया है। जैनों का प्रमुखतम पर्व **क्षमापर्व** है। इसे क्षमावाणी भी कहते हैं। विश्व के इतिहास में यह पहला पर्व है जिसमें शुभकामना, बधाई या उपहार न देकर सभी जीवों से अपने द्वारा जाने–अनजाने में किए गए समस्त अपराधों के लिए हम क्षमायाचना करते हैं। तीर्थंकरों ने सम्पूर्ण विश्व में शांति की स्थापना के लिए सूत्र दिया है – **खम्मामि सव्वजीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।**

मित्ती में सव्वभूयेसु, वेरं मज्झम् ण केणवि।।

अर्थात्, मैं सभी जीवों को क्षमा करता हूं, सभी जीव मुझे भी क्षमा करें, मेरी सभी जीवों से मैत्री है, किसी के साथ मेरा कोई वैर भाव नहीं है।

क्षमावाणी पर्व हमारी वैमनस्यता, कलुषता, वैर, दुश्मनी एवं आपस की तमाम प्रकार की टकराहटों को समाप्त कर जीवन में प्रेम, स्नेह, वात्सल्य और आत्मीयता की धारा को बहाने का नाम है। अनुसंधान–कर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला है कि लम्बे समय तक मन में बदले की भावना, ईर्ष्या–जलन और दूसरों के अहित का चिन्तन और प्रयास करने पर मनुष्य भावनात्मक रूप से बीमार रहने लगता है। क्षमायाचना और क्षमादान चाहे दो आत्मीय जनों के बीच हो अथवा समूहों या राष्ट्रों के बीच हो, यदि ईमानदारी के साथ क्षमायाचना की जाती है तो यह अपमान की भावना का निराकरण करती है। क्षमा का जीवन में बहुत बड़ा महत्व है। अगर इंसान कोई गलती करे और उसके लिए माफी मांग ले तो सामने वाले का गुस्सा काफी हद तक दूर हो जाता है।

क्षमा मांगना और क्षमा करना दोनों महान गुण हैं जो मनुष्य के मन को हल्का कर उसे सुखी बनाते हैं। क्षमा मांग कर या क्षमा दान कर हम किसी पर कोई अहसान नहीं कर रहे होते वरन् अपने मन के सुकून का उपाय कर रहे होते हैं। कहते हैं, भूल होना प्रकृति है, मान लेना संस्कृति है और सुधार लेना प्रगति है। क्षमावाणी पर्व हमें 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत' की शिक्षा प्रदान करता है। हमें यह पर्व सद्भावना का संदेश देता है। यह पर्व ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः' की भावना भाने की प्रेरणा प्रदान करता है।

सुखदेव तिवारी की गली, देवगढ रोड, ललितपुर–284403

जैन अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद

— प्रो. डॉ. भागचंद्र जैन 'भागेन्दु'

अवस्थिति

मध्य प्रदेश के कटनी जिले में कटनी–रीठी–सिहोरा मार्ग पर स्थित 'बहोरीबंद' भारतवर्ष की तीनों – वैदिक, जैन और बौद्ध – संस्कृतियों का सुप्रसिद्ध प्राचीन केन्द्र है। इस स्थान का नाम यहां विद्यमान अनेक बंधानों के कारण '**बहोरीबंद**' पड़ा। यह जबलपुर से उत्तर में 64 कि.मी. दूर और सिहोरा से उत्तर–पश्चिम में 24 कि.मी. दूर, 'कैमूर' पर्वत श्रेणियों की उपत्यका में स्थित है। पश्चिम–मध्य रेलवे की कटनी–बीना ब्रांच लाइन पर स्थित सलैया रेलवे स्टेशन यहां से 27.8 कि.मी. दूर है, और कटनी–इटारसी मुख्य लाइन पर स्थित सिहोरा रोड रेलवे स्टेशन से यह मोटर मार्ग से जुड़ा हुआ है। श्री अलेग्जेंडर कनिंघम इसे ग्रीक इतिहासकार टोलेमी द्वारा उल्लिखित 'थोलोवाना' या थोलवन मानने में अपनी सहमति प्रकट करते हैं।

परिवेश

बहोरीबंद से 4.8 कि.मी. दूर '**रूपनाथ**' नामक स्थान पर सम्राट अशोक के द्वारा ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी का एक लघु शिलालेख मौजूद है।

बहोरीबंद के उत्तर में 3..2 कि.मी. दूर '**तिगवां**' ग्राम में पुरातात्विक महत्व के अवशेषों का बहुमूल्य भंडार है। यहां तीस से भी अधिक मन्दिर थे। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा सन् 1969 में प्रकाशित **ऐतिहासिक स्थानावली** नामक ग्रंथ में 'तिगवां के विषय में उल्लेख है– "(यह) छोटा–सा ग्राम है, जो गुप्तकाल में जैन सम्प्रदाय का केन्द्र था। एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि कन्नौज से आये हुए एक यात्री उभदेव ने पार्श्वनाथ का एक मन्दिर इस स्थान पर बनवाया था जिसके अवशेष अभी विद्यमान हैं। यह मन्दिर अब हिन्दू मन्दिर के समान दिखाई देता है। यहां के खंडहरों में कई जैन मूर्तियां भी प्राप्त हुई हैं।" डॉ. हीरालाल ने लिखा है कि "यह प्रायः डेढ़ हजार वर्ष प्राचीन है। यह चपटी छत वाला पत्थर का मन्दिर है।" मूलतः यह 12 फीट 9 इंच का वर्गाकार छोटा मन्दिर था जिसकी छत गुप्तशैली के अनुसार सपाट बनी थी। इस मन्दिर में गुप्तशैली की विभिन्न अन्य विशेषताएं भी विद्यमान हैं। सम्प्रति इस मन्दिर को 'कंकाली देवी के मन्दिर' के नाम से जाना जाता है। **जबलपुर ज्योति** में

डॉ. हीरालाल ने लिखा है – "इस मन्दिर की दूसरी ओर की दीवार में जैनी तीर्थंकर पार्श्वनाथ की मूर्ति खुदी है।" इससे जान पड़ता है कि मूल में यह जैन मन्दिर रहा होगा जिसे बाद में हिन्दू–देवालय बना लिया गया। इस मन्दिर के निर्माणकाल के सम्बन्ध में श्री राखालदास बनर्जी का मत भी उल्लेखनीय है। इस मन्दिर में वर्गाकार एक केन्द्रीय गर्भगृह है, जिसके सामने एक छोटा मंडप है, मंडप के स्तम्भों के शीर्ष पर्सिपोलिस शैली में बने हैं जिससे यह मन्दिर गुप्तकाल से पूर्व का जान पड़ता है। मन्दिर का निर्माण तो बौद्ध युगीन मन्दिर–वास्तु शिल्प से साम्य रखता है किन्तु पूर्वोक्त साक्ष्यों के परिप्रेक्ष्य में तिगवां का यह मन्दिर अपने मूल रूप में जैन–मन्दिर रहा है।

जैन तीर्थक्षेत्र बहोरीबंद

प्राचीन काल से बहोरीबंद जैन धर्म, संस्कृति, कला, इतिहास और पुरातत्व का समृद्ध केन्द्र है। किन्तु कराल काल के चक्र प्रवाह में यहां का गौरव ध्वंसावशेषों में परिवर्तित हुआ। 1940 ई. के दशक में सिहोरा के तहसीलदार श्री पंचमलाल जैन ने बहोरीबंद ग्राम के 'कांजी हाउस' के निकट जमीन में लेटी हुई सोलहवें जैन तीर्थंकर भगवान शांतिनाथ की भव्य और विशाल प्रतिमा को ईंटों का एक स्तम्भनुमा टिकौना बनवाकर टिकवा दिया था। ग्रामीण जनता उन्हें 'खनुआ देव' के नाम से सम्बोधित करती रही और अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति का अजूबा साधन मानती आ रही है। वर्तमान उत्तुंग शिखरयुक्त भव्य जैन मन्दिर में विराजमान होने से पूर्व वे अपनी बीमारी, भूत–प्रेत की बाधाओं तथा तरह–तरह के संकटों को दूर करने और मनोकामनाओं की सिद्धि हेतु स्थानीय लोग इन 'खनुआदेव' के विग्रह पर जूते–चप्पल आदि का प्रहार करते थे।

1953 ई. में इस लेखक ने इन्हें इसी स्थिति में देखा। लगभग इसी समय सिहोरा के लब्धप्रतिष्ठ एडवोकेट श्री जयकुमार जैन के महामंत्रित्व में एक क्षेत्रीय कमेटी का गठन हुआ। इस समिति में निकटवर्ती स्थानों के अनेक महानुभावों के साथ आदरणीय बाबा कल्याणदास जी ब्रह्मचारी ने अथक पुरुषार्थ और साधना करके बहोरीबंद को वर्तमान कालीन जैन तीर्थक्षेत्र के रूप में विख्यात करने के लिए बहुविध सार्थक प्रयास किए। उनकी इस यात्रा में सर्वश्री जयकुमार वकील, धन्यकुमार जैन सिहोरा, स. सि. लम्पूलाल जी रीठी, सिं. रूपचंद नेताजी बाकल, पं. मोहनलाल जी शास्त्री जबलपुर, पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री कटनी, प्रो, सुरेन्द्रकुमार सिहोरा,

सिं. धन्यकुमार राधेलीय कटनी आदि के साथ प्रबुद्ध समाज का भरपूर योगदान और मार्गदर्शन उल्लेखनीय महत्व रखता है।

सम्प्रति यहां विशाल परिसर में तीन दिगम्बर जैन मन्दिर स्थित हैं। इनमें पाषाण से निर्मित 9 और धातुओं से निर्मित 13 तीर्थंकर मूर्तियों में से 3 कायोत्सर्ग–आसन में काले–भूरे रंग के देशी पाषाण से और 6 पद्मासन में सफेद संगमरमर से निर्मित हैं। धातु से निर्मित छोटी–बड़ी कुल 13 जिनबिम्ब हैं, जिनमें 1 बाहुबली की और 3 सिद्ध भगवान की हैं।

साथ ही चारित्र चक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर मुनि महाराज के पीतल से निर्मित एक युगल चरण चिन्ह हैं। पीतल और ताम्बा धातुओं के बहुत से यंत्र भी विराजमान हैं।

यहां 3 फीट 6 इंच ऊंचे एक देशी पाषाण स्तम्भ में चारों ओर शांतिनाथ भगवान की 32 मूर्तियां उत्कीर्ण हैं।

तीसरे मन्दिर के मूलनायक भगवान महावीर हैं। यह मूर्ति 2 फीट 6 इंच ऊंची है और सफेद संगमरमर से निर्मित है।

बहोरीबंद के मन्दिर संख्या 2 में विराजमान बाहुबली भगवान की मूर्ति देशी काले–भूरे पाषाण से निर्मित है। यह 5 फीट ऊंची और 2 फीट चौड़ी है। दसवीं शती ई. में निर्मित इस भव्य और मनोरम प्रतिमा पर माधवी लता आवेष्टित है। मस्तक के पीछे भामंडल है। माथे पर छत्र के दोनों ओर गजराज उनका कलशाभिषेक कर रहे हैं। उनके नीचे दोनों ओर विद्याधर–युगल माला धारण किए हुए उड़ रहे हैं। उनके नीचे दोनों ओर त्रिभंगी मुद्रा में मुकुटधारी चंवरधारी सुन्दर रूप से निदर्शित हैं। चंवरधारियों के नीचे (कदाचित्) ब्राह्मी और सुन्दरी अपनी–अपनी सखि के साथ बाहुबली की दुर्द्धर तपस्या काल में उन पर आवेष्टित/आरूढ़ लतावल्लरियों आदि को जुदा कर रही हैं। उनके नीचे भक्तिपूर्वक सविनय कर–सम्पुट में कमल–मुकुल धारण किए हुए एक श्रावक (दायीं ओर) तथा श्राविका (बायीं ओर) स्थित है। पादपीठ पर सिंहासन के प्रतीक वनराज सिंह दोनों ओर अंकित हैं। सम्प्रति कृत्रिम पर्वत की रचना कर उस पर बाहुबली की इस भव्य प्रतिमा को विराजमान किया गया है।

इस मन्दिर में भगवान बाहुबली के अतिरिक्त देशी पाषण से निर्मित तीसरे तीर्थंकर भगवान संभवनाथ की कायोत्सर्ग सर्वतोभद्र प्रतिमा भी विराजमान है। इस पर चारों ओर संभवनाथ का मूर्त्यंकन है।

बहोरीबंद में एक पुरातत्व संग्रहालय भी निर्माणाधीन है। इस समय इसके एक कक्ष में 27 मूर्तिखंड संरक्षित–निदर्शित हैं। इनमें से 2 सिहोरा में और शेष 25 यहीं उत्खनन में प्राप्त हुए हैं। ये अवशेष समकालीन कला, संस्कृति और इतिहास के परिचायक हैं।

बहोरीबंद में 11 फरवरी 2002 ई. को श्री जिनबिम्ब प्रतिष्ठा और गजरथ महोत्सव भव्यतापूर्वक सम्पन्न हुआ। इस महोत्सव के प्रसंग से बहोरीबंद के बहुमुखी उत्तरोत्तर विकास और समृद्धि के द्वार समुद्घाटित हुए।

बहोरीबंद का शांतिनाथ प्रतिमाभिलेख

बहोरीबंद मे 5 फीट 6 इंच ऊंचे आसन पर 13 फीट 9 इंच ऊंची तथा 3 फीट 9 इंच चौड़ी सोलहवें जैन तीर्थंकर शांतिनाथ की दसवीं शताब्दी में श्याम वर्ण के देशी पाषाण से कायोत्सर्ग आसन में निर्मित विशाल मूर्ति के पादपीठ में सात पंक्तियों में उत्कीर्ण ऐतिहासिक अभिलेख से ज्ञात होता है कि महासामन्ताधिपति गोल्हणदेव राठौड़ के समय में भगवान शांतिनाथ के एक भव्य जैन मन्दिर का निर्माण किया गया था। यह शासक कलचुरि वंश के राजा गयाकर्णदेव का सामन्त था।

बहोरीबंद की शांतिनाथ प्रतिमा के अभिलेख का पंक्तिबद्ध मूलपाठ निम्न प्रकार है –

1 स्वस्तिश्री सं. 10 (1000, 1010, 1060 वा) फाल्गुन वदि 9, भौमे श्रीमद् गयाकर्ण्णदेव विजयरा –

2 जय (ज्ये) राष्ट्रकूट कुलोद्‌भव महासामन्ताधिपति श्रीमद् गोल्हण देवस्य प्रवर्धमानस्य।।

3 श्रीमद् गोल्लापूर्वाम्नाये वेल्लप्रभाटिकायामुरुकृताम्नाये तर्कतार्किक चूडामणि श्रीमन्

4 माधवनन्दिनानुगृहीतः साधु श्री सर्व्वधरः तस्य पुत्र (त्रो) महाभोजः धर्मदानाध्ययन (ने) रतः तेनेदं का –

5 रितं रम्यं सां (शां) तिनाथस्य मन्दिरं (रम्)। स्वलात्यम् संज्जक (सर्जक) सूत्रधारः स्त्रेष्टि (श्रेष्ठि) नामा। तेल विकृ (ता) नं च महास्वे (श्वे)–

6 तं निर्मितमतिसुन्दरं (रम्) ।।1।।

श्रीमच्चन्द्रकराचार्य्याम्नाय देसी (शी) गणान्वये समस्त विद्याविनयानन्दित

7 विद्वज्जनाः प्रतिंस्टा (ष्ठा) चार्याः सुभद्राः चिरं जयन्तु।

अर्थ

स्वस्ति श्री संवत् 10... (1000, 1010 या 1060) (विक्रमाब्द) फाल्गुन वदी नवमी भौमवार को विख्यात श्रीमान गयाकर्ण देव के विजय राज्य में

राष्ट्रकूट कुल (राठौर वंश) में उत्पन्न महासामन्ताधिपति समृद्धिशाली श्रीमान गोल्हणदेव (के संरक्षण में) गोलापूर्व आम्नाय में (उत्पन्न) वेलप्रभाटिका नगरी में जिन्होंने अपनी आम्नाय की कीर्ति बढ़ाई है, जो तर्कतार्किक चूड़ामणि श्रीमान माधवनन्दि के कृपा पात्र (भक्त) हैं, उन श्रीमान साहु श्री सर्वधर के सदैव धर्म–दान एवं अध्ययन में रत रहने वाले सुपुत्र श्रीमान साहु महाभोज ने, शांतिनाथ प्रभु के इस रमणीक मन्दिर का निर्माण कराया। श्रेष्ठि पद को धारण करने वाले, सहज उपलब्ध हुए 'संजक' सूत्रधार (स्थपति–मिस्त्री) के (निर्देशन में) इस महाधवल अतिसुंदर जिनालय का निर्माण सम्पन्न हुआ। श्री चंद्रकर आचार्य की आम्नाय में, विद्वज्जनों को अपने ज्ञान और विनय से प्रमुदित करने वाले, देशीयगण अन्वय के प्रतिष्ठाचार्य श्रीमान सुभद्र चिरंजीवी हों।

इस अभिलेख में कलचुरिवंश के राजा गयाकर्ण देव के राज्य में उनके महासामन्त राष्ट्रकूट वंश के गोल्हणदेव के शासन में संवत् 10... (1000, 1010 अथवा 1060 में) भगवान शांतिनाथ के भव्य मन्दिर के निर्माण तथा मूर्ति की प्रतिष्ठा का वर्णन किया गया है। इस विशाल शांतिनाथ मूर्ति और भव्य मन्दिर के निर्माणकर्ता तथा इनकी प्रतिष्ठा का कार्य सम्पन्न कराने वाले गोलापूर्व वंश में उत्पन्न हुए श्री महाभोज थे। इस अभिलेख में 'गोलापूर्वाम्नाये' पद का विशेषण 'उरूकृपाम्नाये' उल्लिखित है। इस विशेषण से श्री महाभोज के प्रभावशाली होने और साधन सम्पन्नता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। मन्दिर और मूर्ति के निर्माता तथा प्रतिष्ठाकारक श्री महाभोज के परिवार पर 'तर्क तार्किक–चूड़ामणि' श्रीमान् माधवनन्दि की विशेष कृपा थी। श्री महाभोज स्वयं धर्मात्मा, दानवीर और स्वाध्यायी थे। उनके पिता का नाम श्री सर्वधर था और इस मूर्ति और प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रतिष्ठाचार्य महामनीषी 'श्री सुभद्र' थे। उनके वैदुष्य और विनय गुण से तत्कालीन विद्वद्जन अत्यधिक अभिभूत और प्रसन्न थे।

अभिलेख के संवत् में तीसरा अंक स्पष्ट नहीं पढ़ा जा सका जिसके कारण उसे 1010 मानने पर विद्वानों में कुछ मतभेद हैं। प्रथम और द्वितीय अंकों से 10 की संख्या और चौथे अंक से शून्य स्पष्ट पढ़ा गया है इसलिए इस अभिलेख को संवत् 1010 और 1060 के बीच कहीं भी रखा जा सकता है।

इस मूर्ति अभिलेख की पहली विशेषता यह है कि इसमें शासक गयाकर्णदेव के नाम के साथ उनके स्थानीय मंडलाधिपति गोल्हणदेव राठौर का नाम भी सूचित किया गया है। दूसरी महत्वपूर्ण बात है कि इसमें मन्दिर

निर्माता कलाकार संजक का नाम हमें ज्ञात होता है। तीसरी विशेषता यह है कि गोलापूर्व आम्नाय के उल्लेख के कारण यह लेख गोलापूर्व जाति का गौरव–ध्वज सिद्ध होता है। यह लेख दसवीं शताब्दी में, कलचुरी राज्य में धर्मानुरागी गोलापूर्व जाति को बहुसंख्यक, समृद्धिशाली, प्रभावी और राज्यमान्यता प्राप्त होने की सुनिश्चित जानकारी देता है। चौथी विशेषता यह है कि मन्दिर मूर्ति के प्रतिष्ठाचार्य श्री सुभद्र का नाम उनके परम्परा आचार्य चंद्रकर के नाम सहित अंकित मिल जाता है। ये कुछ इस प्रकार की सूचनाएं हैं जो मूर्ति लेखों में प्रायः उपलब्ध नहीं होती। दसवीं शताब्दी या उसके पूर्वकाल में तो बिल्कुल भी नहीं।

कलचुरि शासन में अपनी महानता प्रदर्शन करने हेतु पदाधिकारियों के पदो के आगे महा उपपद का प्रयोग होता था। राष्ट्रकूट काल में भी ऐसा था।

प्रस्तुत प्रतिमाभिलेख में गोलापूर्व आम्नाय में हुए महान तार्किक माधवनन्दि के परम भक्त साधु सर्वधर के पुत्र महाभोज के द्वारा यहां शांतिनाथ मन्दिर बनवाया गया था। यह नगरी थी या उद्यान, लेख में स्पष्ट नहीं किया गया है। इस नाम का आज बहोरीबंद के निकट कोई ग्राम नहीं है। अतः अनुमानतः यह स्थल विल्ववृक्षों वाली कोई वाटिका थी। वेल्लप्रभाटिका में संभवतः 'भ' के स्थान में 'व' रहा है।

शांतिनाथ की प्रतिमा कायोत्सर्ग आसन में सिलेटी पाषाण से निर्मित है। पाषाण फलक 13 फीट 9 इंच ऊंचा और 6 फीट 10 इंच चौड़ा है। नख से सिर तक प्रतिमा की अवगाहना कनिंघम के अनुसार 12 फीट 2 इंच और चौड़ाई 3 फीट 10 इंच है। प्रतिमा के केश घुंघराले और वर्तुलाकार पांच हिस्सों में ऊपर की ओर उठे हुए (बंधे) दर्शाये गये हैं। वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिह्न अंकित है। प्रतिमा के परिकर का ऊपरी भाग नहीं है। शेष अंश में प्रतिमा की दोनों ओर एक–एक उड़ते हुए मालाधारी विद्याधर देव हैं। इनके नीचे दोनों ओर एक–एक उपासक हाथ जोड़े दर्शाए गए हैं। इनके एक–एक पैर के घुटने भूमि पर टिके हुए हैं और दूसरे पैर कुछ मुड़े हुए हैं, ये आभूषण धारण किये हुए हैं। इनके नीचे आसन पर सात पंक्ति का अभिलेख उत्कीर्ण है। अभिलेख के नीचे मध्य भाग में तीर्थंकर के चिन्ह स्वरूप दो हिरण पास–पास ऐसे अंकित किए गए हैं मानों वे परस्पर कुछ कह रहे हों। हिरणों के सामने की ओर मुख किए एक–एक सिंह अलंकरण स्वरूप अंकित किया गया है।

28, सरोज सदन, सरस्वती कॉलोनी, दमोह–470661

नैनागिरि तीर्थ : महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य

– श्री सुरेश जैन (IAS)

पौराणिक एवं धार्मिक ग्रन्थों में रेशन्दिगिरि (ऋषीन्द्रगिरि) के नाम से उल्लिखित नैनागिरि तीर्थ शाश्वत एवं प्राचीनतम तीर्थ है। इस तीर्थ से सम्बंधित कुछ तथ्य भारतीय संस्कृति को भी प्राचीनकालीन प्रामाणिकता प्रदान करते है। अतः निम्नांकित तथ्य ऐतिहासिक दृष्टि से आधारभूत एवं महत्वपूर्ण है।

1 डॉ. हरीसिंह गौड़ विश्वविद्यालय, सागर, के वरिष्ठ प्राध्यापकों ने सेमरापठार (बेबस) नदी के उत्तरी तट पर स्थित सिद्धशिला के शिखर पर स्थित गुफा में निर्मित शैल भित्ति चित्रों का 2 फरवरी, 2014 को निरीक्षण कर घोषित किया है कि सभी शैल चित्र ईसा पूर्व 40 हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन हैं। इसी सिद्ध शिला से भगवान नेमिनाथ के काल में आचार्य वरदत्तादि पांच मुनीश्वर मोक्ष पधारें थे। ढाई हजार वर्ष पूर्व नैनागिरि में आयोजित समवशरण में भगवान पार्श्वनाथ विराजमान रहे थे।

2 आचार्य कुन्दकुन्द के द्वारा दो हजार वर्ष पूर्व ईसा की प्रथम शताब्दी में प्राकृत में विरचित और 'सच्चा जिनवाणी संग्रह' (सन् 1935) में प्रकाशित **निर्वाण काण्ड** की उन्नीसवीं गाथा में नैनागिरि (ऋषीन्द्रगिरि रेशंदीगिरि) का निम्नांकित शब्दों में वर्णन किया गया है:–

पासस्स समवसरणेसहिया वरदत्तादि मुणिवरा पंच।
रिस्सिंदे गिरि–सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं।।

अर्थात्, भगवान नेमिनाथ के काल में रेशंदीगिरि तीर्थ की शिखर से वरदत्त आदि पांच प्रमुख ऋषि एक साथ मोक्ष पधारे थे। उन्हें नमस्कार हो। इस तीर्थ पर भगवान पार्श्वनाथ का समवसरण आयोजित किया गया था।

3 नैनागिरि के पर्वत पर भगवान पार्श्वनाथ के प्राचीनतम मन्दिर (मन्दिर क्र.37) की दीवार पर खचित प्राचीनतम शिलालेख चैत्र शुक्ल अष्टमी विक्रम संवत 1107 (8 अप्रैल, सोमवार, सन् 1050 ई., शक 972) का है। ऊंचे टीले की खुदाई करने पर यह शिलालेख और मन्दिर के भूगर्भ से 13 प्राचीनतम प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं, जिन्हें इसी मन्दिर और संग्रहालय में स्थापित किया गया है।

4 राजा भोज के समकालीन आचार्य शुभचन्द्र ने 11वीं शताब्दी में संस्कृत भाषा में लिखित अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "**ज्ञानार्णव**" के अट्ठाईसवें सर्ग के प्रथम श्लोक में जैन तीर्थ नैनागिरि जैसे ध्यान योग्य सर्वोत्तम तीर्थों का वर्णन करते हुए लिखा है :-

सिद्धक्षेत्रे महातीर्थे पुराणपुरूषाश्रिते।
कल्याणकलिते पुण्ये ध्यानसिद्धि प्रजायते।।

अर्थात्, सिद्धक्षेत्र जहां कि बड़े-बड़े प्रसिद्ध पुरुष ध्यान कर सिद्ध हुए हों तथा पुराण पुरुष अर्थात् तीर्थंकरादिकों ने जिनका आश्रय लिया हो, ऐसे महातीर्थ, जो तीर्थंकरों के कल्याणक स्थान हों, में ध्यान की सिद्धि होती है।

ज्ञानार्णव के द्वितीय से अष्टम श्लोकों में आचार्य शुभचन्द्र द्वारा वर्णित ध्यान स्थल के प्रायः सभी लक्षण और इसके लिए आवश्यक सभी सुविधाएं नैनागिरि में उपलब्ध हैं। नैनागिरि में वन है। पर्वत शिखर है। नदी का किनारा है। वृक्षों का समूह है। नदियों का संगम है। गुफाएं हैं। सिद्धकूल (सिद्धशिला) है। कोलाहल विहीन स्थल है। समस्त ऋतुओं में सुख देने वाला रमणीक स्थान है। उपद्रव विहीन स्थल है। नैनागिरि में राग की प्रवृत्ति घटती है। इस प्रकार सर्वोत्तम तीर्थ की सैद्धांतिक और प्राकृतिक विशेषताओं में से सर्वाधिक तेरह विशेषताएं नैनागिरि में उपलब्ध हैं। इन कारणों से नैनागिरि योग और ध्यान के लिए सर्वोत्तम और अनुपम तीर्थ है।

5 भैया भगवतीदास ने संवत् 1741 में आश्विन शुक्ला 10वीं (17 अक्टूबर 1684 ई., मंगलवार) को हिन्दी में विरचित **निर्वाण काण्ड** के तीसरे पद के पूर्वार्द्ध में भगवान नेमिनाथ के काल में नैनागिरि से मोक्ष गए आचार्य वरदत्त और चार मुनियों – इन्द्रदत्त, मुनीन्द्रदत्त, सायरदत्त और गुणदत्त – का श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया है। कवि ने उन्नीसवें एवं बीसवें पद में नैनागिरि तीर्थ की महिमा तथा भगवान पार्श्वनाथ के समवसरण का सुन्दर एवं सरल शब्दों में वर्णन करते हुए 'तीन लोक के तीरथ' नैनागिरि का प्रतिदिन वंदन करने के लिए जन-जन को प्रेरित किया है –

समवसरण श्रीपार्श्व-जिनन्द, रेसिन्दीगिरि नयनानन्द।
वरदत्तादि पंच ऋशिराज, ते वन्दौं नित धरम-जिहाज।।
तीन लोक के तीरथ जहां, नित प्रति वन्दन कीजै तहां।
मन-वच-कायसहित सिर नाय, वन्दन करहिं भविक गुण गाय।।

6 भूटान देश के निवासी ब्र. लामचीदास ने सन् 1749 से 18 वर्ष तक पैदल चलकर भगवान आदिनाथ-ऋषभदेव की निर्वाणभूमि अष्टापद के

दर्शन किए। कैलाश मानसरोवर की यात्रा की। उन्होंने वर्ष 1768 में पुनः एक वर्ष की यात्रा करते हुए शिखरजी, पावापुरी, चंपापुरी, गिरनार, नैनागिरि और श्रवणबेलगोला तीर्थ सहित अनेकों सिद्ध एवं अतिशय तीर्थों के दर्शन किए। वे अपने जीवन के अंतिम तीन वर्ष की अवधि में श्रवणबेलगोला में रहे। ब्रह्मचारी श्री लामचीदास ने श्रवणबेलगोला से पूरी समाज के प्रतिनिधियों को अपनी इन यात्राओं के सम्बन्ध में एक 17 पृष्ठीय पत्र लिखा था। यह पत्र अपने पुराने संग्रह में से निकालकर पण्डित ख्यालीराम, अलीगढ़, ने ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी को दिया। यह पत्र सन् 1912 में "यात्रा श्री कैलाश पर्वत" शीर्षक से भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी मुम्बई, द्वारा प्रकाशित और वैभव प्रेस, मुम्बई, द्वारा मुद्रित किया गया।

7 स्वस्ति श्री देवेन्द्र कीर्ति जी भट्टारक, कारंजा, के निर्देशन में शक संवत 1804, तदनुसार ईस्वी सन् 1882, में हस्तलिखित ग्रन्थ श्री दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र रामटेक, जिला नागपुर, में उपलब्ध है। इस ग्रन्थ का गहन अध्ययन पू. अभयसागर जी महाराज द्वारा किया गया है। उन्होंने 11 अप्रैल, 2004 को श्री सुरेश जैन, अध्यक्ष, जैन तीर्थ नैनागिरि, को इस ग्रन्थ का 'अथ सर्व त्रैलोक्य जितानां जयमाला लिख्यते' भाग अवलोकन कराया। पृ. 471 के 45 वें छंद में नैनागिरि क्षेत्र के सम्बन्ध में निम्नांकित शब्दों में वर्णन किया गया है –

समोसरण पार्श्वे मुनिध्यात्वा। कर्महता शिवपुरपद गत्वा।।
रेशंदीगिरि नाम प्रसिद्धा। वल्लादिक सौख्यसुसंवृद्धा।।

8 स्वस्ति श्री सुरेन्द्र कीर्ति जी भट्टारक का "जैन बद्री मूलबद्री यात्रा पाठ" पं. पन्नालाल, जोबनेर ने कार्तिक शुदी 3 गुरूवार विक्रम संवत् 1940 ईस्वी सन् 1883 को लेखबद्ध किया है। इसकी मूल प्रति दिगम्बर जैन मन्दिर जोबनेर, जयपुर (राजस्थान), के शास्त्र भण्डार में सुरक्षित है। डॉ. प्रेमचन्द्र रांवका, ने इस मूल पाण्डुलिपि से प्रतिलिपि कर एक प्रति अपने पत्र दिनांक 11.8.95 के उत्तर में श्री सुरेश जैन, अध्यक्ष, जैन तीर्थ नैनागिरि को प्रेषित की है। छन्द संख्या 4 से 8 तक में रेशन्दीगिरि (नैनागिरि) के साथ कुण्डलपुर, द्रोणागिरि का उल्लेख किया है –

अतिशय क्षेत्र महान, कोस चालीस दक्षिण दिशा।
पार्श्वनाथ कर ध्यान, पपौरा नगर में वन्दना।।4।।
तहां तै चल कै द्रौणगिरि वंदौ, फल होई वरगाम जी।
मानस्तंभ चतुर्थकाल के, पर्वत ऊपरी धामजी।।5।।

रेशन्दीगिरि पार्श्व प्रभु के, समवशरण तहां आयौ जी।
देव दुंदुभी निरत करतां, गंधर्व अप्सरा गायौ जी।।6।।
कुण्डलपुर महावीर जी बंदौ, अतिशयवंत महान जी।
मन्दिर तहां चालीस बने हैं, पर्वत ऊपर धाम जी।।7।।
सात हाथ की प्रतिमा जिनकी, व आसन नभ धाम जी।
सरोवर कुण्ड भरे द्रव्य धोई पूजन गाय जी।।8।।

9 बाबा दौलतराम जी वर्णी 'नैनागिरि' द्वारा 30 मई, 1904,को **नैनागिरि पूजन** विरचित की गई। नैनागिरि तीर्थ पर यह पूजन अष्ट द्रव्य से गत 113 वर्षों से नियमित रूप से प्रतिदिन की जा रही है। इस पूजन की प्रथम, पंचम एवं षष्ठम पंक्तियां उल्लेखनीय हैं –

पावन परम सुहावनों, गिरि रेशिंदि अनूप।
पन वरदत्तादि मुनीन्द्र, शिवस्थल सुखदाई।
पूजों श्री गिरिरेशिंदि, प्रमुदित चितथाई।।

बाबा दौलतराम जी हिन्दी के महाकवि रहे हैं। उन्होंने प्राकृत भाषा में विरचित 'गोम्मटसार – जीवकाण्ड' जैसे गूढ़, गहन और जटिल विषय की 734 प्राकृत गाथाओं को अपनी सहज और सरल विद्वत्ता पूर्ण कवित्व क्षमता से हिन्दी **काव्य छंदोदय** में पिरोकर 1203 गेय और रम्य छंद विरचित किए हैं। **छंदोदय** भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा वर्ष 2018 में प्रकाशित किया गया है।

10 सन् 1923 में गठित अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद के संस्थापक, **जैन मित्र** और **वीर** पत्रिकाओं के सम्पादक और अनेक ग्रन्थों के रचयिता और टीकाकार ब्र. शीतलप्रसाद जी के द्वारा संग्रहीत **मध्यप्रान्त, मध्यभारत और राजपूताना के प्राचीन जैन स्मारक** प्रकाशित किया गया है। इस ग्रन्थ में श्री शीतलप्रसाद जी, जो स्वयं को "जैन धर्म का प्रेमी" कहते और लिखते थे, के द्वारा लिखित उपोद्घात में 10 जून, सन् 1926 का उल्लेख है। नैनागिरि तीर्थ के इतिहास की दृष्टि से इस ग्रन्थ के पृ. 112–113 का निम्नांकित उद्धरण महत्वपूर्ण है –

पन्ना राज्य के उत्तर में बांदा, अजयगढ़, भेसौंदा; पूर्व में कोठी, नागौद, सुहावल, अजयगढ़; दक्षिण में जबलपुर, दमोह; पश्चिम में छत्रपुर, चरखारी हैं। पन्ना के राजा ओरछा वंश के बुन्देले राजा हैं। सन् 1671 में छत्रसाल बुन्देलखण्ड का राजा था। राजधानी कालिंजर थी जो सन् 1675 में पन्ना में बदली गई। यहां हीरे की खाने प्राचीन काल से 17वीं शताब्दी

तक प्रसिद्ध रहीं। **नयनागिरि या रेशिंदीगिरि** तालुका मलहरा में बक्स्वाहा से 16 मील दूर है। यहां पहाड़ी पर 40 दिगम्बर जैन मन्दिर हैं। **कुछ संवत् 1702 (सन् 1645) में बने हैं। वार्षिक मेला होता है, जहां बहुत दिगम्बर जैनी एकत्रित होते हैं। सन् 1886 में एक लाख जैनी एकत्रित हुए थे।** यह तीर्थ है। दिगम्बर जैन शास्त्रों में प्रमाण है कि यहां वरदत्त आदि पांच मुनियों ने मुक्ति पाई थी और श्री पार्श्वनाथ जी का समवशरण आया था।

11 श्री हजारीमल्ल कवि विरचित **गिरनार महात्म्य** (विधान पूजन) श्री वंशीधर जैन मास्टर, ललितपुर द्वारा सम्पादित एवं जैन विजय प्रेस, सूरत से ईसवी सन् 1916 में प्रकाशित किया गया है। श्री बंशीधर जी ने इस पुस्तिका की भूमिका (28 जून, 1916) में लिखा है कि अग्रवाल समाज के गोईल गोत्रीय पण्डित हजारीमल्ल, जो अच्छे कवि और विद्वान थे, ने इस कविता की रचना विक्रम संवत 1925 (ई. सन् 1868) में की थी। वे पं. दौलतराम जी के शिष्य थे। **गिरनार महात्म्य** के पृष्ठ 89 पर नैनागिरि तीर्थ का उल्लेख निम्नांकित शब्दों में किया गया है :–

रसनादेगिरि (रेशंदीगिरि) ते शिव पाई, वरदत्त आदि पंच ऋशिराई।
समोशरण श्री पार्श्व जिनंदा, वंदो जान सदा सुख कंदा।।

ऊं ह्रीं श्री वरदत्तादि पंच ऋशीश्वराणां निर्वाणास्पद श्री रसनादेगिरि (रेशंदीगिरि) सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामिति स्वाहा।

12 नैनागिरि में निर्मित मंदिर में विराजमान मूर्तियों की प्रतिष्ठा के लिए माघ सुदी 5 बुधवार, विक्रम संवत् 1948, (तदनुसार 5 जनवरी 1892) को गजरथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन पड़वार–निवासी श्री सिंघई अमान जोरावल द्वारा किया गया था। इसकी मूल आमंत्रण पत्रिका नैनागिरि तीर्थ पर प्रदर्शित की गई है।

30, निशात कॉलोनी, भोपाल–462002

✧✧✧

पर्यावरण के बनें प्रहरी

– श्री राजीव कान्त जैन

ऑक्सीजन अंबार सोख रहे, मां का दम घोंट रहे
भौतिक सुख के वास्ते, वायु विष कार्बन घोल रहे
ए.–सी.,कार बढ़ता प्रचलन, मशीनी युग बढ़ती उलझन
फेफड़ों में फैल रहा धुआं, जिंदगी हो गयी एक जुआ
जो न हम अब चेते, बच्चे फल चुकायेंगे
प्रदूषण पीने को, नीलकंठ बन जी पायेंगे
वायुमंडल वसुधा वसन, विकास नहीं ओजोनहरन
होलिका की चुनरी वो, समस्त सृष्टि होगी दहन
पर्यावरण के बनें प्रहरी, हम अब सुधर जायें
कार्बन मुक्त कर, वायुमंडल आक्सीजन से सजायें
उपवन पीपल नीम उगायें, हर आंगन तुलसी खिलायें
जमीन से जोड़ें जीवन, प्राणवायु की बयार बहायें
ए.–सी., कार कम करें चलन, मां माटी मोल चुकायें
आइये संकल्प लें सब, साइकिल से आये जायें
समय शुल्क व्यय बिन, आईये स्वास्थ्य बनायें
अपना पर्यावरण बचायें, चलिये साइकिल चलायें
चलिये साइकिल चलायें

चीफ इंजीनियर, भारतीय रेलवे

अच्छा कर

– श्री अमरनाथ

कभी किसी का बुरा न सोचो,
कभी किसी का बुरा न कर।
जग में सबका अच्छा कर।
अच्छा कर, तू, अच्छा कर।।

करो क्रोध से मन क्यों भारी,
त्याग क्रोध, मन हल्का कर।
नहीं कभी तू गुस्सा कर।
कभी किसी पर ना गुस्सा कर।
अच्छा कर, तू, अच्छा कर।।

जो भी तुझको दिया ईश ने,
कुछ ईश्वर को अर्पण कर।
कुछ गैरों को बांटा कर।
बाकी का तू सेवन कर।
अच्छा कर, तू, अच्छा कर।।

कभी किसी से झूठ न बोलो,
कभी न झूठा वादा कर।
सच्चा कर, तू, सच्चा कर।
अच्छा कर, तू अच्छा कर।।

मन लालच में, डुबा नहीं तू,
पर–धन पर मत ललचा कर।
नहीं अधिक की इच्छा कर।
कभी न माया भटका कर।
अच्छा कर, तू, अच्छा कर।।

सबका मालिक एक वही है,
सबको खुद सा समझा कर।
नहीं किसी से उलझा कर।
रख तू सबसे सुलझा कर।
अच्छा कर, तू, अच्छा कर।।

401–ए, 'अभिषेक', उदयन–1, बंगला बाजार, जेल रोड, लखनऊ–2

✧✧✧

माता का गुण गान

– श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'

आओ! मिल कर आज करें हम, माता का गुणगान।
उदर दरी में रख निज शिशु जो, करती जन्म प्रदान।
आओ! मिल कर आज करें हम, माता का गुणगान।

सुत के पालन पोषण में जो, रहती नित प्रति मग्न।
सुत सोये सुत स्वप्न नींद में, तज निज निद्रा मग्न।
चलना उठना और बोलना, पाया जिससे ज्ञान।
आओ! मिल कर आज करें हम, माता का गुणगान।

खोल नेत्र पहले जो देखा, हुआ प्रथम मां–दर्श।
थी तो पीड़ा ग्रस्त किन्तु था, सुत हित मुख पर हर्ष।।
भूल सकते नहीं हम जीवन भर, मां का सुस्तन पान।
आओ! मिल कर आज करें हम, माता का गुणगान।

गिरा अगर शिशु कहीं भूमि पर, हुआ मातृ उर दर्द।
प्रकृति कोप से रहे सुरक्षित, लगे नहीं गर्मी सर्द।
कभी बनी गुरु कभी सेविका, निश दिन सुत पर ध्यान।
आओ! मिल कर आज करें हम, माता का गुणगान।

मां–बिन स्पन्दन सृष्टि न चलता, जननी जग आधार।
पशु–पक्षी कीटादि योनि भी, पाती मां का प्यार।।
मां ही अम्बा, मां जगदम्बा, मां करुणा की खान।
आओ! मिल कर आज करें हम, माता का गुणगान।

'चन्द्रा मण्डप', 370/27, हाता नूरबेग, संगमलाल वीथिका,
सआदतगंज, लखनऊ–3

क्रांतिकारी संत

(31 अगस्त, 2018, को समाधिस्थ मुनि तरुणसागर के प्रति विनयांजलि)

— श्री आदिकुमार भगवंतराव बंड

गुरुदेव श्री! आपने तो बहुत ही बड़ी
क्रांति की है फिर एक बार,
शायद आज तक की सबसे बड़ी क्रांति।
जन्म के वक्त भी क्रांति की थी आपने,
मा समेत बिना किसी को पता चले ही इस दुनिया
में पदार्पण किया था आपने।
जन्म से लेकर आखरी सांस तक
कितनी क्रांतिया की है आपने,
यह शायद आप भी नहीं जानते गुरुवर!
लेकिन हम जानते हैं सब कुछ,
आपके हर पग पर क्रांति हुआ करती थी
आप विहार करते थे तब भी
और आप स्थानापन्न रहते थे तब भी।
लेकिन इस बार तो आपने कमाल ही कर दिया गुरुवर।
सल्लेखना या संथारा का मतलब
खुद अपनी कृति से ही
दुनिया को बता दिया आपने।
दवा और दुवाओं के उपचार खतम होने पर ही
सल्लेखना ली जाती है, यह जिनवाणी का मर्म
अपनी जान की बाजी लगाकर ही
दुनिया भर को बता दिया आपने।
और संथारा को आत्मघात कहने वालों का मुंह
सदा सदा के लिये बंद कर दिया है आपने,
और फिर एक बार 'क्रांतिकारी संत'
होने की प्रतीति दी है आपने।
जय हो क्रांतिकारी राष्ट्र—संत
मुनि श्री तरुणसागर जी महाराज की!

336, मातृ वंदन, नया नन्दन वन, नागपुर—440009

तुम मानवता के अग्रदूत

(अहिंसा दिवस पर महात्मा गांधी के प्रति श्रद्धांजलि)

– श्री दुलीचंद जैन

तुम मानवता के अग्रदूत बन कर आये,
तुम इस धरती पर मुक्तिदूत बनकर आये,
व्याकुल जग में संदेश अमरता का लाये,
तुम मानव–तन में स्वयं ईश बनकर आये।

बापू तुमने पथ–भ्रांत भटकती दुनिया को,
सुख और शांति का पुनः मार्ग था बतलाया,
भूले, अशांत, व्याकुल पीड़ितजन को फिर से,
वह सत्य–प्रेम का अमर ज्ञान था सिखलाया।

तेरे उर में था गहरा करुणा स्रोत भरा,
पद–दलित मनुज को तूने आगे बढ़वाया,
तेरा उर सागर से भी विस्तृत गहरा था,
तूने मानव को था हिंसा से हटवाया।

आंधी–सी मानव के जीवन में तुम लाये,
जिससे जन–जन का सोया सा गौरव जागा,
कुछ ज्वाला के कण अंतर में थे सुप्त पड़े,
इस नये प्रभंजन से उनका चेतन जागा।

तुम मानवता के अग्रदूत बन कर आये,
तुम इस धरती पर मुक्ति दूत बनकर आये।

नं. 70, टी.टी.के. रोड, आल्वारपेट, चेन्नई–600018

✦✦✦

श्रीमती विमला देवी नाहर जैन की दीक्षा के उपलक्ष में

— श्री लूणकरण नाहर जैन

विमला देवी बनने जा रही, साध्वी पंच महाव्रतधारी।
उनका संयमी जीवन हो, अति–अति सुखकारी।।1।।
बचपन से ही धर्म भावना, मन में थी अति भारी।
मेरे छोटे भाई प्रेम चन्द की पत्नी बन, निर्लिप्त जिन्दगी धारी।।2।।
पारिवारिक जिम्मेदारी पूर्ण होते ही, पति वियोग भी आया।
दुख की इस महान घड़ी में भी, धर्म ध्यान अपनाया।।3।।
श्रमण संघ की महान साध्वी, मनोहर कुंवर जी प्यारी।
गुरू माता बन दीक्षा देकर, गुलजार की मधुकर की फुलवारी।।4।।
गुरू माता की आज्ञा में रहकर, सेवा धर्म निभाना।
जिस उद्देश्य से संयम धारा, उसको सफल बनाना।।5।।
निर अतिचार संयम का पालन करना,
क्रिया में नहीं दोष लगाना।
मनोरथ दूसरा पूर्ण किया अब तीसरा पूर्ण हो,
यही भव्य भावना भाना।।6।।
सूर्य नगरी का भाग्य सवाया,
जहां विमला जी ने दीक्षा पायी।
लूणकरण कमला देवी नाहर परिवार
वन्दना कर देता उन्हें शत्–शत् बार बधाई!

नाहर भवन, 514, राजेन्द्र नगर, लखनऊ–4

✦✦✦

स्वानुभव पर आधारित स्वास्थ्य सम्बन्धी सुझाव

— श्री कैलाश नारायण टण्डन

प्रातः जागरण

सूर्योदय से दो घंटे पूर्व उठने का नियम बनायें। कमरे को प्रकाशित करने के बाद बिस्तर पर बैठ जायें। नासिका का जो स्वर चल रहा हो उस ओर की हथेली मुंह के सामने रखें तथा उसका चुम्बन करें। यही कार्य दूसरी हथेली को पहली हथेली के साथ बगल में रखकर करें। उसे अपने मुख मण्डल से स्पर्श करें। फिर दोनों हाथों से भूमि का स्पर्श करें और परमेश्वर के प्रति आभार प्रकट करें जिसने तुम्हें सुप्रभात के दर्शन कराये। बिस्तर पर बैठे—बैठे अपने शरीर के विभिन्न अंगों को, विशेष कर हाथ पैर को, गति प्रदान करें।

ऊषा पान

रात्रि में तांबे के पात्र में रखे हुए करीब डेढ़ लीटर या चार गिलास जल कुल्ला करने के बाद धीरे—धीरे पियें। उत्तम यही है कि जिन व्यक्तियों को कब्ज की शिकायत रहती है वे रात्रि का भोजन करने से डेढ़ घंटा पूर्व एक गिलास हल्के गर्म पानी में डेढ़ चाय के चम्मच के बराबर ईसबगोल की भूसी डालकर रख दें। 5—10 मिनट बाद चम्मच से घोल को चलायें। जब घोल गाढ़ा हो जाये तो उसे पी जायें और फिर अपने काम में व्यस्त हो जायें। सेवन उस समय किया जाये जब बायां स्वर चलता हो। पानी बत्तीसी को चिपका कर इस प्रकार पियें कि वह दांतों से छनता हुआ पेट में जाये।

कब्ज—निवारण

पानी पीने के बाद दो—तीन मिनट इधर—उधर घूमें। इस बीच अपने दाहिने हाथ के अंगूठे से ठोडा (ठुड्डी) के मध्य भाग पर हल्का दबाव देते रहें या मलते रहें। इससे मलवेग का अनुभव होगा और मल का पूर्ण एवं सहज रूप से निष्कासन हो जायेगा। शौच के पश्चात् हाथ मिट्टी या साबुन से साफ करें।

मुख—शुद्धि

मुख शुद्धि के लिए दातुन या जड़ी—बूटी वाले मंजन का प्रयोग करना चाहिए। मंजन अंगुली से धीरे—धीरे करें। कुल्ला कुछ देर बाद करें। तांबे या चांदी की जीभी से जीभ को नित्य साफ करना चाहिये। दाहिने अंगूठे से बांयी ओर के टांसिल्स और बायें अंगूठे से दाहिनी ओर के

टांसिल्स दबायें। अंगूठे से तालू का भी मर्जन करना चाहिये। तर्जनी और मध्यमिका अंगुली की सहायता से गले और जीभ की सफाई करना बहुत जरूरी है।

अन्य क्रियायें

कफ प्रकृति वाले व्यक्तियों को नेति तथा नौली भी करना चाहिये परन्तु किसी योग्य शिक्षक के निर्देशन में। अंतिम रूप से कुल्ला करने के बाद मुंह में पानी भर कर अपनी आंखों पर ठण्डे पानी (ताजे जल) के छीटे भी मारना चाहिये। इससे नेत्र ज्योति बढ़ती है तथा नेत्र विकारों से मुक्ति मिलती है। सिर को पीछे की ओर झुकाकर शुद्ध सरसों के तेल की कुछ बूंदें Ink dropper या Eye dropper की सहायता से दोनों नथुनों में क्रमशः डाले और तेल को सुड़क कर गले तक ले जाने का प्रयास करें। दाहिने हाथ से नासिकाग्र का Clock-wise बायें से दायें तथा anti-clock wise दायें से बायें मलना भी लाभप्रद है।

स्नान

स्नान के लिए ताजे जल का प्रयोग करना चाहिए। शीत ऋतु में हल्के गर्म जल का प्रयोग करें। नदी में स्नान करना या फौवारा (Shower) से स्नान करना लाभप्रद है। स्नान में साबुन का सप्ताह में एक बार ही प्रयोग करे। साबुन ग्लीसरीन युक्त हो तो त्वचा शुष्क नहीं होती है। जहां पसीना मरता है उन स्थानों की सफाई पर विशेष ध्यान देना है। गुप्तांगों की सफाई पर नित्य ध्यान देना चाहिए। स्नान करने के बाद बदन पोछने के लिए सूती, मोटे तौलिये का प्रयोग करना चाहिये। बदन को रगड़ कर पोछना चाहिये। यदि हार्निया की शिकायत हो तो स्नान के तौलिये से जांघ के जोड़ों पर दोनों हाथ से तौलिया पकड़ कर ऊपर नीचे करते हुए 3–4 मिनट तक बारी–बारी से रगड़ना चाहिये। स्नानादि के बाद साफ धुले वस्त्र धारण कर अपने इष्ट देवता या परम पिता परमेश्वर के समक्ष आसन पर बैठकर पूजा–प्रार्थना आदि करना चाहिये।

आसन तथा व्यायाम

उषा काल का समय नाड़ी शोधन, प्राणायाम, भ्रामरी, पवनमुक्त आसन, शवासन और सूर्य नमस्कार के लिए उपयुक्त है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिये कुछ हल्के शारीरिक व्यायाम भी करना आवश्यक है। आयु तथा आवश्यकतानुसार किसी योग्य शिक्षक के निर्देशन में इसका चुनाव और अभ्यास करना चाहिये।

टहलना

सर्वप्रथम एक गिलास गुनगुने पानी में आधा नींबू निचोड़ कर उसमें एक चम्मच शुद्ध शहद मिलाकर पी जायें। ऋतु और मौसम के अनुसार कपड़े पहन कर सूर्योदय से पूर्व प्रातः भ्रमणार्थ निकल जायें। कम से कम 3 कि.मी. पैदल चलना जरूरी है। प्रातः कालीन स्वच्छ वायु और बाल रवि की किरणें शरीर के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। खुले मैदान, बगीचे, पार्क, नदी के किनारे या समुद्र के किनारे टहलना अति उत्तम है। वर्षा ऋतु को छोड़कर अन्य महीनों में हरी कोमल दूर्वा घास पर नंगे पैर टहलना भी लाभप्रद है। टहलने का कार्य अकेले ही करें। समूह में बात–चीत करते हुए टहलना बुद्धिमानी नहीं है। टहलते समय मौन रहना चाहिये और मानसिक जप द्वारा समय का सदुपयोग करना चाहियं। टहलने का निर्धारित या अपेक्षित समय समाप्त होने के बाद आप अपने मित्रों एवं परिचितों के बीच बैठकर गपशप, हंसी मजाक और महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा कर सकते हैं परन्तु विवादग्रस्त विषयों से यथा–संभव दूर रहें।

सुबह का नाश्ता

याददाश्त या स्मृति उत्तम बनाये रखने के लिये सर्वप्रथम 6 या 7 काजू को शहद लगाकर खूब चबा–चबा कर खायें। प्रातः काल मौसमी फलों का नाश्ता करना अति उत्तम है। फलों का जूस भी लिया जा सकता है। परन्तु फलों के साथ जल का सेवन नहीं करना चाहिये। खरबूजा खाने के बाद शरबत तथा आम खाने के बाद दूध पीना स्वास्थ्य वर्धक है। चाय का सेवन अहितकर है और **Bed Tea** तो बहुत हानिप्रद है। जड़ी बूटियों से बनी चाय का सेवन निःसंकोच किया जा सकता है। कच्ची डबल रोटी में मक्खन लगा कर खाना तथा उस पर मट्ठा पीना बुद्धिमानी का काम नहीं है। आयुर्वेद के नियमों के अनुसार मट्ठे का सेवन दोपहर के भोजन की समाप्ति पर करना चाहिये। नाश्ते में मसालेदार तथा तली हुई वस्तुओं का प्रयोग करना ठीक नहीं है। नाश्ता हल्का पौष्टिक तथा सुपाच्य होना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आवश्यकतानुसार अलग–अलग भोजन पात्र में भोजन परोसना चाहिए। यदि परिस्थितिवश अत्यधिक ठंडे और अत्यधिक गर्म पदार्थों का सेवन करना पड़े तो पहले ठण्डे पदार्थ का सेवन करे और फिर उसके बाद गर्म पदार्थ खायें।

दोपहर का भोजन

दोपहर के भोजन का समय नाश्ते के समय के चार घंटे बाद ही होना चाहिए। भोजन प्रारंभ करते समय यदि दाहिना स्वर चलता हो तो

उत्तम है। भोजन हमें उसी समय करना चाहिए जब भूख लगी हो। भोजन करने के पूर्व यदि आवश्यक हो तो जल पी लेना चाहिये। भोजन के मध्य में जल पीना उचित नहीं है। भोजन प्रारंभ करने से पूर्व हाथ मुंह धो लेना चाहिये। भोजन सादा और पौष्टिक होना चाहिए। भोजन न ज्यादा गरम और न ज्यादा ठंडा होना चाहिए। चटनी–अचार और मसाले तथा घी से बनी वस्तुओं से परहेज करना चाहिए। भोजन आने पर उसे सर्वप्रथम परमेश्वर को अर्पण करें और उसे भगवत् प्रसाद समझ कर ग्रहण करें। भोजन एक बार में ही परोस लें। बार–बार नहीं। भूख से कम खायें। 1/4 जगह हवा के लिए छोड़ना जरूरी है। भोजन करते समय बात–चीत न करें, केवल आवश्यक होने पर ही बोलें। यदि इशारे से काम चल जाये तो उत्तम है। भोजन पात्र में जूठा भोजन नहीं छोड़ना चाहिये। भोजन समाप्ति के डेढ़ घंटे बाद ही जल पीना चाहिए। भोजन खूब चबाकर खाना चाहिए। भोजन करने के बाद एक गिलास मट्ठा पीना लाभप्रद है। कई बार कुल्ला करके मुंह साफ कर लेना चाहिये। गीले हाथ आंखों, मुंह और पेट पर फेरना चाहिए तथा लघुशंका निवारण हेतु जाना चाहिए। भोजन करने के बाद करीब 10 मिनट बज्रासन में बैठना चाहिये। ऐसा करने से अपान वायु निकल जायेगी। इसके पश्चात् समतल बिस्तर या चटाई पर चित लेट जाइये। गहरी और लम्बी 8 सांसे लीजिए। फिर दाहिनी करवट लेटकर 16 गहरी और लम्बी सांसें लीजिए। भोजन के तुरन्त बाद न तो मानसिक श्रम कीजिए और न शारीरिक श्रम कीजिए। दोपहर का भोजन करने के बाद सोना नहीं चाहिए। विश्राम करना उचित है परन्तु शवासन में विश्राम करना उत्तम है।

शाम का नाश्ता

दोपहर के भोजन के चार घंटे बाद ही नाश्ता करना चाहिए। नाश्ते में जूस या कोई पौष्टिक पेय जैसे Horlicks या Complan लेना चाहिए। पेय पदार्थ के साथ बिस्कुट भी लिया जा सकता है।

रात्रि का भोजन

रात्रि का भोजन हल्का एवं सुपाच्य होना चाहिये। रात्रि के भोजन का समय सोने के समय से कम से कम 2 घंटा पूर्व होना चाहिये। सामान्यतः 8 बजे का समय ठीक रहता है।

117/एच–2/56, पाण्डु नगर, कानपुर–208005

साहित्य सत्कार

साहित्याचार्य डॉ.पं. पन्नालाल जैन : अभिनन्दन दीपिका : संयोजक–सम्पादक डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु'; 28, सरोज सदन, सरस्वती कॉलोनी, दमोह–470661; वर्ष 1989; मूल्य रु. 201/–

साहित्याचार्य पं. पन्नालाल जैन, सागर, को यह अभिनन्दन ग्रन्थ 1990 में भेंट किया गया था। इसके सम्पादक मण्डल के अध्यक्ष हमारे पिता जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन थे परन्तु 1988 में दिवंगत हो जाने के कारण वे अभिनन्दन समारोह में सम्मिलित नहीं हो सके। ग्रन्थ के संयोजक–सम्पादक डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' थे, उन्होंने ही अब इस ग्रन्थ की प्रतिलिपि उपलब्ध कराई है।

इस ग्रन्थ में 6 खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में पूज्य साधुवर्ग के आशीष और विद्वान मनीषियों की शुभ कामनायें हैं। द्वितीय खण्ड में पं. पन्नालाल जी के व्यक्तित्व और कृतित्व के सम्बन्ध में लेख हैं। इस खण्ड में विशेष पठनीय पन्नालाल जी का आत्मकथ्य है जिसमें उनके जीवन संघर्ष का और साधना क्रम का मार्मिक विवरण प्रस्तुत है। उनका एक महनीय कार्य यह रहा कि उन्होंने दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद की स्थापना की, जिसमें वे 25 वर्ष महामंत्री रहे और 5 वर्ष अध्यक्ष रहे तथा अन्त तक उसके संरक्षक बने रहे। उन्होंने अपनी साहित्य रचना की विधा का भी उल्लेख किया है।

उनके सम्बन्ध में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने अपना अभिमत व्यक्त करते हुए लिखा है– "पं. पन्नालाल जी साहित्य के प्रतिष्ठित आचार्य, शास्त्र मर्मज्ञ, सफल अध्यापक, कुशल अनुवादक एवं टीकाकार, सुकवि, सुवक्ता, कर्मठ साहित्य सेवी एवं समाज चेता सज्जन हैं, समाज की विभूति हैं तथा साहित्यिक प्रकृति के नियम संयम सेवी विनम्र धार्मिक भव्य हैं।... इनके शोध–प्रबन्ध 'महाकवि हरिचन्द : एक अनुशीलन' पर उन्हें 1973 में सागर विश्वविद्यालय, सागर, ने पी–एच. डी. की उपाधि प्रदान की थी।... उपाधिधारी आचार्य तो अनेक है किन्तु उनमें से पन्नालाल जी जैसे बिरले ही हैं जो अपनी "साहित्याचार्य उपाधि को सुष्ठु रूप से सार्थक करते हैं। अपने इन चिर सहयोगी, साहित्यिक बन्धु के अभिनन्दन में हार्दिक योग देकर मैं स्वयं को गौरवान्वित मानता हूं।"

डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' ने डॉ. पन्नालाल जी के संस्कृत भाषा में रचे गये मौलिक साहित्य का जो विवरण दिया है वह महत्वपूर्ण है।

पं. पन्नालाल जी की विभिन्न रचनाओं के सम्बन्ध में विद्वानों द्वारा समीक्षात्मक लेख इस ग्रन्थ में संकलित हैं। तृतीय खण्ड में डॉ. पन्नालाल जी के पुराण एवं साहित्य सम्बन्धी लेखन का समीक्षात्मक विवरण दिया गया है। चतुर्थ खण्ड में सिद्धान्त सम्बन्धी लेखों का संकलन है। पंचम खण्ड में दर्शन एवं संस्कृति से सम्बन्धित लेखों का संकलन है। आचार्य शांतिसागर के सम्बन्ध में भी एक लेख है। आचार्य श्री का जन्म 1871 ई. में हुआ था और 84 वर्ष की अवस्था में 18 सितम्बर 1955 को उन्होंने शरीर त्याग किया था। दिगम्बर चर्या की पुनर्स्थापना उनके द्वारा की गयी थी। इस लेख में उनके प्रति भक्ति भावना से हमें कुछ लेना–देना नहीं हैं परन्तु हमें यह देखकर विस्मय हुआ कि ब्रिटिश शासन द्वारा जैन समाज की स्वामिभक्ति सुनिश्चित करने के लिए उनका जो उपयोग किया गया था उसका कोई उल्लेख नहीं है।

षष्ठ खण्ड में संस्कृत काव्यालोक संकलित है जिसमें पं. पन्नालाल जी द्वारा रचे गये संस्कृत के पद्यों का संकलन है।

ग्रन्थ में चित्र भी पर्याप्त मात्रा में दिये गये हैं।

डॉ. 'भागेन्दु' जी के प्रति हम आभारी है कि उन्होंने इस ग्रन्थ की प्रति अब उपलब्ध कराई, यद्यपि हमारे पिता जी इसके सम्पादक मण्डल के वरिष्ठ सदस्य थे। डॉ. पन्नालाल जी के सम्बन्ध में इसी अंक में गुरुगुण–कीर्तन के अन्तर्गत स्मृतिशेष श्री रमा कान्त का लेख भी दिया जा रहा है।

ज्ञान दिवाकर स्मृति ग्रन्थ : प्र. सं. प्रो. डॉ. नलिन के शास्त्री, (बोधगया), सं. श्री कमल कुमार बाकलीवाल; प्र. श्री रूपेन्द्र छावड़ा 'अशोक', सी–146, सिद्धार्थ नगर, जे.एल.एन. मार्ग, जयपुर–302017

आचार्य श्री भरतसागर जी महाराज के स्मृति ग्रन्थ के रूप में यह ग्रन्थ प्रकाशित है। प्रथम खण्ड में सम्पादक, संयोजक और अध्यक्ष के उद्गार संकलित हैं। द्वितीय खण्ड में विनयांजलि संकलित हैं।

भरतसागर ने छोटे लाल के रूप में राजस्थान के विराम लुहारिया में सुश्रावक श्री किशनलाल जी के घर में माता सुश्राविका गुलाबी के कोख से 7 अप्रैल सन् 1949 में चैत्र सुदी नवमी के दिन जन्म लिया। अपने भाईयों

में वह सबसे छोटे थे। मैट्रिक पास करने के बाद उन्हें एक सम्भ्रान्त सेठ के यहां नौकरी मिल गई। सेठ जी के साथ वे श्री विमलसागर जी महाराज का दर्शन करने बांसवाड़ा गये और वहीं से वे गुरुदेव के साथ चल दिये। 1968 में उन्होंने क्षुल्लक दीक्षा ली और उनका नाम शांतिसागर रखा गया। सन् 1972 में कार्तिक में उन्होंने मुनि दीक्षा धारण की और उनका नाम भरत सागर रखा गया। 1979 में आपको सोनगिरि सिद्ध क्षेत्र पर गुरुदेव ने उपाध्याय पद से संस्कारित किया। 29 दिसम्बर 1994 को उनके गुरु आचार्य श्री विमलसागर जी समाधिस्थ हो गये। 10 फरवरी 1994 को मधुवन में गुरुदेव के पट्ट शिष्य के रूप में उनकी आचार्य पद पर प्रतिष्ठा की गई और 21–10–2006 तक वे इस पद को अलंकृत करते रहे, जब अतिशय क्षेत्र मणिन्दा पार्श्वनाथ (उदयपुर) में समाधिस्थ हो गये।

तृतीय खण्ड में उनके प्रति काव्यांजलि संकलित हैं। इसका प्रारम्भ श्री सुरेश जैन 'सरल', जबलपुर, की काव्यांजलि से होता है। चतुर्थ खण्ड में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है।

ग्रन्थ सचित्र है और इसमें श्री भरतसागर जी का सचित्र. चित्रण है।

ज्ञान सरोवर : कृतिकार–सम्पादक श्री कमलकुमार जैन बाकलीवाल; प्र. आचार्य शांतिसागर (छाणी) स्मृति ग्रन्थमाला, बुढ़ाना, जि. मुजफ्फरगनर–251309

आचार्य शांतिसागर (छाणी) स्मृति ग्रंथमाला के रजत जयंती पर्व पर **ज्ञान सरोवर** प्रकाशित किया गया। इस संस्था की स्थापना आचार्य श्री ज्ञानसागर द्वारा की गई थी। ज्ञानसागर जी आचार्य शांतिसागर (छाणी) की परम्परा के हैं। उनका जन्म 1 मई 1957 को मुरैना में हुआ था और 31 मार्च 1988 को मुनि दीक्षा लेने के बाद उनका नाम श्री ज्ञानसागर प्रचारित हुआ। 27 मई 2013 को उन्हें बड़ा गांव (बागपत) में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया। उनके द्वारा किये गये विशिष्ट कार्यों का इसमें उल्लेख हैं। सामाजिक क्षेत्र में उनका विशिष्ट कार्य जैन समाज के बिछुड़े श्रावक जो सरॉक के नाम से जाने जाते हैं, को पुनः जैन समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का सफल उद्यम है। सरॉक उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, और बिहार व झारखंड के कुछ क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

ज्ञानसागर जी की प्रेरणा से मुजफ्फरनगर में प्राच्य श्रमण भारती और मेरठ में श्रुत संवर्धन संस्थान की स्थापना की गई जिनके माध्यम से

137 ग्रन्थों का प्रकाशन किया गया। इनमें पिता जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की कृति **युग–युग में जैन धर्म** भी सम्मिलित है।

मंगलम् पुष्पदन्ताद्यो : ले. मुनि सौरभसागर; प्र. सौरभसागर सेवा संस्थान, गाजियाबाद; अक्टूबर 2018

पुष्पगिरि तीर्थ प्रणेता आचार्य श्री पुष्पदन्तसागर के शिष्य मुनि श्री सौरभसागर द्वारा इस पुस्तक का प्रणयन किया गया है। जब सौरभसागर जी ने अपने गुरु पुष्पदन्त जी के नाम से मंगल श्लोक का संशोधन कर 'मंगलम् कुन्दकुन्दाद्यो' के स्थान पर 'मंगलम् पुष्पदंताद्यो' का प्रचार किया तो उस पर नैष्ठिक विद्वानों ने आलोचना की। चाचा जी श्री अजित प्रसाद जैन ने **शोधादर्श 48** (नवम्बर 2002) में इस विषय पर एक सारगर्भित लेख प्रकाशित किया था। सौरभसागर जी ने पुष्पदन्त को अपने आचार्य से भिन्न **षट्खण्डागम** के कर्ता आचार्य पुष्पदन्त–भूतबली से समीकृत किया है और साथ ही आचार्य कुन्द–कुन्द को प्रायः एक काल्पनिक व्यक्ति की अवस्थिति प्रदान की है। जो विचार इस पुस्तक में प्रस्तुत किये गये हैं उनसे मूल आम्नाय के प्रतिष्ठित विद्वानों को प्रसन्नता नहीं होगी तथापि जो विवेचन इस पुस्तक में हैं, वह भी विचार करने योग्य है।

पद्मनन्दिपंचविंषतिका : पद्यानुवाद कर्ती सौ. त्रिशला जैन शास्त्री, लखनऊ; प्र. दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप, हस्तिनापुर (जि. मेरठ); 24 अक्टूबर, 2018

आचार्य श्री पद्मनन्दिकृत **पंचविंषतिका** का हिन्दी पद्यानुवाद सौ. त्रिशला जैन ने हिन्दी में प्रस्तुत किया है। भाषा सहज और सरल है। 26 अधिकारों में 940 पद्यों में पद्मनन्दि जी ने जैन अध्यात्म से सम्बन्धित विभिन्न विषयों पर प्रकाश डाला है। उपसंहार में लेखिका ने अपना जीवन–परिचय दिया है। यह कृति लेखिका की काव्य प्रतिभा को उजागर करती है।

अज्ञानतिमिरभास्कर : ले. श्रीमद विद्यानंद सूरीश्वर महाराज; सं. श्री संयम कीर्ति; प्रं. श्री पार्श्वाभ्युदय प्रकाशन तथा श्री सम्यग्ज्ञान प्रचारक

समिति; वर्ष 2018; प्राप्ति स्थान – श्री नृपेन भाई आर. शाह,– 4 सरगम फ्लैट, वी.आर. स्कूल के पास, विकास ग्रुति रोड, पालदी, अहमदाबाद–380007

मूल ग्रन्थ गुजराती भाषा में है जो हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित किया गया है। इसमें ब्राह्मणीय वैदिक परम्परा का तर्कपूर्ण तरीके से विवेचन किया गया है। यह ग्रन्थ विचारोत्तेजक है। शोधक विद्वानों के लिए इसमें काफी सामग्री संकलित है।

With the Ferry Man और **जैन धर्म को जानें** : ले. श्री दुलीचंद जैन साहित्य रत्न, प्र. करुणा अन्तर्राष्ट्रीय, मुड़ौत सेंटर, द्वितीय तल्ला, 343, ट्रिप्लीकेन हाई रोड, चेन्नई–600005 / नं. 70 टी.टी. के रोड, आल्वारपेट, चेन्नई–600018; (मो. 9444047263);

With the Ferry Man में 12 अध्यायों में अंग्रेजी में जैन धर्म के बारे में सामान्य लोगों के लिए उपयोगी जानकारी दी गई है। इसका प्रकाशन अक्टूबर 2018 में हुआ। इसका मूल्य रु. 50/– रखा गया।

जैन धर्म को जाने में प्रश्नोत्तर के माध्यम से जैन धर्म के सम्बन्ध में सामान्य जिज्ञासा को तुष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। इसका प्रकाशन नवम्बर 2018 में हुआ। मूल्य रु. 30 है। प्रारम्भ में प्रश्नमंच के माध्यम से 96 बिन्दुओं पर जानकारी दी गई है।

उपरोक्त दोनों ही पुस्तकें जैन धर्म के विषय में सामान्य ज्ञान के जिज्ञासुओं के लिए उपयोगी हैं।

– डॉ. शशि कान्त

✧✧✧

समीक्षा

– डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल

शोधादर्श–85 ऐतिहासिक दस्तावेज है जो प्रेरक और संग्रहणीय है। इसमें तीन युगपुरुषों के व्यक्तित्व, कृतित्व, जैन संस्कृति एवं इतिहास के संरक्षण, निर्भीक निष्पक्ष पत्रकारिता, समाज सुधार की निस्पृही दिशा तथा विश्वास, कृतज्ञता और अपनत्व के स्नेहसूत्र में गुम्फित पीढ़ी–दर–पीढ़ी की सहज एकात्मता के दर्शन होते हैं। स्मृति शेष डॉ. ज्योति प्रसाद जी का परिवार समाज, धर्म, संस्कृति एवं इतिहास के क्षेत्र में अमूल्य योगदान निष्काम–योगी के रूप में प्रतिभूत करता है। जैन इतिहास के क्षेत्र में उनका योगदान कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता। वे प्रथम जैन इतिहास–पुरुष हैं जिन्होंने अंधकार में छिपे जैन महापुरुषों, आचार्यों और उनके प्रभाव को प्रकाश में लाकर जैन संस्कृति को महिमा मंडित किया है। लोकोक्ति है कि अपनी संस्कृति और इतिहास से अपरिचित समाज उत्थान नही कर सकता। इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जी ने इस अभाव को पूरा कर जैन समाज के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। यह विडम्बना है कि समाज ने उनके इस योगदान की महत्ता की उपेक्षा की।

युग–पुरुष–त्रयी–स्मृति विशेशांक पिता–भाई–पुत्र या अग्रज–भाई–भतीजा' के व्यक्तित्व और कृतित्व की स्फूर्तिदायी गाथा है जिसमें उनके सामाजिक–सांस्कृतिक योगदान को संग्रहीत किया गया है। प्रथम खण्ड में स्मृतिशेष **डॉ. ज्योति प्रसाद जी** का जीवन परिचय, उनकी इतिहास–परक शोध कृतियां, सम्पादन/लेखन का विवरण, कृतियों की समीक्षा और उनके मानवीय धर्मपूरित, धर्मनिष्ठ जीवन का प्रेरक परिचय है।

द्वितीय खण्ड स्मृतिशेष **श्री अजित प्रसाद जी** के सम्बन्ध में है। उनको जीवन काल में जीवन संगिनी और दोनों पुत्रों का वियोग जैसा हृदय विदारक घटनाओ का संयोग मिला और वे स्वयं भी अनेक व्याधियों से पीड़ित थे किन्तु उन्होंने समताभाव पूर्वक अपना संतुलन बनाये रखा और अंत तक सम्पादक/पत्रकार के धर्म का निर्वाह करते रहे। ऐसे अनोखे व्यक्ति विरले ही होते हैं। श्री अजित प्रसाद जी से मेरा पत्राचार–सम्बन्ध था, वे मेरे मार्गदर्शक और प्रशंसक थे। उन्हें मेरी सविनय श्रद्धांजलि समर्पित है।

श्री अजित प्रसाद जी संस्थाओं के पारदर्शी और कुशल संचालक थे। उत्तर प्रदेश सरकार की 'श्री महावीर निर्वाण समिति' और उसकी उत्तराधिकारी संस्था 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0' का

कुशल संचालन मृत्यु पर्यन्त किया। इस संस्था का चिठ्ठा और आय–व्यय पत्रक प्रति वर्ष **शोधादर्श** में प्रकाशित होता है। इससे प्रभावित होकर मैंने अपने से सम्बद्ध संस्थाओं से अनुरोध किया कि वे भी अपना वार्षिक आय–व्यय पत्रक प्रकाशित करें। निजी प्रामाणिकता एवं नैतिक मूल्यों के फलस्वरूप ऐसी पारदर्शिता सम्बद्ध संस्थाओं में आती है जो अनुकरणीय है। ज्ञातव्य है कि भ0 महावीर निर्वाणोत्सव के काल मे प्रदेश में धर्म चक्र के माध्यम से एकत्रित धनराशि से महावीर ट्रस्ट, इन्दौर, की स्थापना की गयी थी, जो अब एक निजी ट्रस्ट जैसा सिकुड़ गया है। ट्रस्ट की पत्रिका **सन्मतिवाणी** भी अब इन्दौर–आधारित सचित्र समाचार–पत्रिका जैसी हो गयी है। राष्ट्रीय स्तर की समाजिक और बौद्धिक जगत की शीर्ष संस्थायें अब व्यक्ति या ग्रुप केन्द्रित होकर बिखर रही है या निष्प्रभावी हो रही हैं। परिणाम स्वरूप श्रमण संस्कृति अब स्वेच्छिक संस्कृति बनती जा रही है। यह गम्भीर और चिन्तनीय है।

डॉ0 शशि कान्त का 'स्मृति के झरोखे से' आलेख भावबोधक और रोमांचक है। इसका प्रकाशन अन्य पत्रिकाओं में भी होना चाहिए। पिता–पुत्र के स्नेहिल सम्बन्ध सहज स्वाभाविक होते हैं, किन्तु चाचा–भतीजे के ऐसे स्नेहिल सम्बन्ध अपवाद स्वरूप ही समझे जाते हैं। ऐसे भाग्यवान जीवों का मैं अभिनन्दन करता हूं। कृतघ्नता, कुटलाचार व कृपणता से पारिवारिक जीवन असहज हो जाता है।

तृतीय खण्ड युगपुरुष **श्री रमा कान्त जी** से सम्बन्धित है। वे गद्य लेखन में कुशल 'गुरुगुण–कीर्तन' के लेखक, व्यंग्य लेखक एवं कवि के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त थे। उनके योग्य पुत्र अंशु जैन 'अमर' ने अपने दादा जी के साथ पिता श्री के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को उद्घाटित किया है, जो पठनीय है। तत्काल संदर्भ हेतु उनके 52 व्यंग्य पद्य प्रकाशित हुए हैं जो विभिन्न घटनाओं एवं विषयों पर प्रकाश डालते हैं। व्यंग्य अधिक प्रभावी और प्रेरक होते हैं। ये व्यंग्य अभी भी समसामयिक लगते हैं। "गिलास आधा भरा है" के आलेख उनके सकारात्मक सोच को निदर्शित करते हैं।

चतुर्थ खण्ड में 6 आलेख शोध एवं स्वतंत्र चिन्तन से परिपूर्ण है। डॉ. शशि कान्त जी का आलेख – 'श्रवणबेलगोला के गोम्मटेश्वर बाहुबलि' संक्षिप्त हैं किन्तु सर्व–सम्बद्ध जानकारी से परिपूर्ण है। डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव का शोध पूर्ण आलेख 'खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेख के मंगल चिन्ह' जैन धर्म एवं उसके मंगल अंकनों की प्राचीनता सिद्ध करता है। उससे इनके विकास का क्रम भी प्रकट होता है। मेरे गृह नगर चन्देरी के दो हजार वर्ष प्राचीन जैन मंगल चिन्हों के उल्लेख से लेख की व्यापकता व्यक्त

हुई है। डॉ. अनिल कुमार जैन का आलेख 'हिन्दुत्व की हवा में कहीं जैनत्व न खो जाये' एक सामाजिक-सामयिक लेख है। उसमें उठाये गये बिन्दु विचारणीय होकर दिशाबोध भी कराते हैं जो हमारी अस्मिता की रक्षा हेतु अनिवार्य है। लेखक के विचारों से स्वयं भी प्रभावित हो रहा हूं। मेरा यह अनुभव है कि जैन समाज अपनी वीतरागी विशिष्ट संस्कृति की उपेक्षा कर वैदिक संस्कृति की ओर उन्मुख हो रहा है। हमने न केवल क्रियाएं अपितु वैदिक शब्दावली को भी अपनाया है। यदि यह क्रम चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब हम वैदिक विद्वानों की भावनानुरूप अपना स्वतंत्र अस्तित्व वैदिक-संस्कृति में विलय कर यथार्थ में उनके अंग हो जायेगें।

जैन एकता के सूत्रों को खोजता श्री जतन लाल रामपुरिया का आलेख विचारणीय है। इस उद्देश्य हेतु हमें आचार/क्रिया का आग्रह, छोड़ना पड़ेगा। अन्य आलेख भी चिन्तनीय और प्रेरक हैं।

स्थायी स्तम्भ – **साहित्य सत्कार** में 16 क्रतियों की समीक्षा प्रकाशित की गयी है। इसमें मेरी कृति 'आप हम मूल आम्नायी है' की समीक्षा भी सम्मिलित है। डॉ. शशि कान्त जी का आभारी हूं। उनकी श्रम-साधना एवं तर्क पूर्ण चिन्तन से पाठकगण सहज ही नवीन कृतियों से परिचित हो जाते हैं।

अंत में चित्रावली प्रकाशित है। डॉ. ज्योति प्रसाद जी के चार पीढ़ियों के परिवार से अपरिचित व्यक्ति के मन में **शोधादर्श-85** के आलेख व सामग्री पढ़ कर परिवार के प्रति मन में जो भाव उठते होते हैं, उन भावों के अनुरूप भव्य चित्रावली देख कर ऐसा अनुभव होता है कि जैसे वे सब हमारे परिचित हैं। इस चित्रावली के प्रकाशन के लिये सम्पादक महोदय को बधाई! मेरा प्रत्यक्ष में सम्पादक श्री नलिनकान्त जी जैन और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी से दि. 6-12-2015 को कुन्द-कुन्द भारती, दिल्ली, में आयोजित सम्मान समारोह में परिचय हुआ था, जिसकी सुखद स्मृति ताजा है।

शोधादर्श-86 में **श्री अजित प्रसाद जी** ने श्वेताम्बर सम्प्रदाय के विद्वान मुनि श्री चन्द्रप्रभ सागर जी के विचारों को उदधृत कर श्वेताम्बर साधुओं के आगम विरुद्ध क्रिया-काण्ड का यथार्थ स्वरूप दर्शाते हुए उन मुनि महाराज का यह सन्देश दिया है कि 'किसी को मुनि बनने की प्रेरणा देने के बजाय उसे गृहस्थ सन्त बनने की प्रेरणा दी जानी चाहिये।' अपरिपक्व दीक्षाएं नहीं दी जायें। आध्यात्मिक विकास, तप-संयम का दीर्घकालीन अभ्यास, अपरिग्रहता, जितेन्द्रियता, मंद कषाय आदि होने पर ही दीक्षा दी जाये। दिगम्बर मुनि साधु-जीवन के चरम शिखर हैं, त्रिकाल

वन्दनीय साधु परमेष्ठी हैं। ज्ञातव्य है कि पूज्य वर्णी जी ने भी पं. श्री गोरावाला, पं. श्री कैलाशचन्द्र जी, पं. श्री जगन्मोहन लाल जी को पिच्छी की ओर संकेत कर कहा था – 'तुम तीनों जो कर रहे हो उसे ही करते जाओ। पिच्छी की इच्छा मत करना।' पूज्य आचार्य श्री चन्द्रप्रभ सागर जी ने भी ऐसा ही सुझाव दिया था।

श्री अंशु जैन 'अमर' का आलेख– 'कीर्ति स्तम्भ – एक नयी परम्परा' विचारोत्तेजक और मार्गदर्शक है। मई, 2017 में गणाचार्य श्री विरागसागर जी के 25वें आचार्य पदारोहण के उपलक्ष में करगुंवाजी सहित 25 स्थानों पर कीर्ति–स्तम्भ स्थापित करने की घोषणा हुई थी। पुसगांव (महाराष्ट्र) में प्रथम स्तम्भ 'विश्व अहिंसा मैत्री स्तम्भ' के नाम से दि. 27–7–2018 को लोकार्पित हुआ। पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के दीक्षा के 50 वर्ष पूर्ण होने पर कीर्ति–स्तम्भों की स्थापना हो रही है जो आचार्य श्री के जीवन, जीवन–दर्शन एवं संयम–संस्कृति के योगदान को रेखांकित करेंगे। हमने भगवान महावीर के उपदेश उत्कीर्ण कराने का सुझाव दिया है। भगवान महावीर के लोक–कल्याणकारी उपदेशों का उल्लेख किसे इष्ट नहीं होगा?

विद्वान लेखक ने तीन प्रकार के कीर्ति स्तम्भ – विजय स्तम्भ (राणा कुम्भ का विजय स्तम्भ), कीर्ति–स्तम्भ (गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति) तथा मान–स्तम्भ का उल्लेख किया है। इस सम्बन्ध में, मैंने पुराविद श्री नीरज जैन कृत **'चित्तौड़ दर्शन'** का अध्ययन किया। विद्वान लेखक ने 21 जैन एवं जैनेतर विद्वानों के मतों को उदधृत करते हुए निम्नलिखित निष्कर्ष दिये –

1 जैन कीर्ति–स्तम्भ एक दिगम्बर जैन मान–स्तम्भ है जिसका निर्माण एक मन्दिर के सामने हुआ है।

2 इस स्तम्भ का निर्माण 11वीं–12वीं शताब्दी ईस्वी में हुआ।

3 विक्रम सं. 1495 में जिस समय राणा कुम्भा का विशाल कीर्ति–स्तम्भ निर्मित हो रहा था, उसी समय जैन स्तम्भ का जीर्णोद्धार एक ओसवाल महाजन गुणराज ने कराया (ई. 1428)। श्री नीरज जी ने लिखा है कि राणा कुम्भा का कीर्ति–स्तम्भ वि. सं. 1505 में स्थापित हुआ था जब कि नौ वर्ष बाद वि.सं.1514 में महमूद सुल्तान पर विजय हुई थी। अस्तु यह विजय–स्तम्भ न होकर वैष्णव मन्दिर के समक्ष निर्मित विष्णु ध्वज रूप मान–स्तम्भ है। कालान्तर में इसे विजय–स्तम्भ कहा जाने लगा। श्री नीरज जी का यह कथन विचारणीय है। इसी सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता प्राप्ति की स्मृति में नगरों–नगरों में विजय स्तम्भों की स्थापना की गई थी।

तीर्थंकर भगवंतों के पंच कल्याणक महोत्सव मनाये जाते हैं और उन स्थलों को अतिशय क्षेत्र/सिद्धक्षेत्र कहते हैं। ये सभी पूज्य हैं। अब जिन दीक्षा धारियों के जन्म–दिन, दीक्षा–दिन, पदारोहण–दिन और समाधि–दिवस मनाये जाने लगे हैं। अब, वह समय भी सन्निकट है जब इनके स्थलों को महिमा मंडित किया जायेगा। इसे हम समय का प्रभाव ही कह सकते हैं। पूज्यता का पिरामिड उलटा हो गया है।

श्री सुरेश जैन (रिटा. आई.ए.एस.) ने बाबा दौलतराम वर्णी 'नैनागिरी' की रचनायें खोजकर **गोम्मटसार–छन्दोदय** का प्रकाशन करया, तदर्थ साधुवाद। 'चिन्तन विमर्श' में डॉ. शशि कान्त जी ने 20वीं शती के वर्णी महानुभावों का विवरण देकर वर्णी नाम/पद के सम्बन्ध में जिज्ञासा व्यक्त की है। इस सम्बन्ध में मैंने डॉ. हुकमचन्द जी भारिल्ल, जयपुर, से चर्चा की। उन्होंने बताया कि **कादम्बरी** में वर्णी शब्द का उल्लेख हुआ है जो वैदिक ब्रह्मचर्य व्रतधारी महानुभावों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। जैन परम्परा में भी सातवीं प्रतिमाव्रतधारी को वर्णी नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। डॉ. शशि कान्त जी ने श्री अमितशाह के जैन न होने के कथन को अस्मिता लोप होने के दृष्टिकोण से देखा। उनका यह चिन्तन सत्य के निकट है। जैन नामधारी न जाने क्यों, अपना धर्म या जाति बताने में संकोच करते हैं। जैन संस्कृति और समाज के स्थायित्व की दृष्टि से यह प्रवृत्ति अनुचित है। डॉ. साहब ने जैन समाज के सांसद, विधायक गण आदि से जो अनुरोध किया है, वह अस्मिता की रक्षा हेतु करणीय है। साध्वाचार के अन्तर्गत सन 1920 की घटना रोमांचक है। जैन संस्कृति एवं परम्परा का निर्वाह, बिना परिवर्तन किये, करना सभी का कर्तव्य है।

डॉ. (सौ.) अलका अग्रवाल और प्रो. डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु' का मुक्तक काव्य **'वज्जालग्गं'** का समीक्षात्मक शोध–निष्कर्ष एवं सुभाषित पदों का विवरण मानव जीवन को समरसी–सुखी बनाने में सक्षम हैं। **वज्जालग्गं** से अध्ययन की प्रेरणा मिलती है। डॉ. (सौ0) अलका जी ने इस पर शोध–प्रबन्ध लिखकर पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की, तदनुसार उनका अभिनन्दन। उनके इस प्रयास से एक विलुप्त बहुमूल्य ग्रंथ प्रकाश में आ गया। सरहिंद के टोडरमल जी की धार्मिक सहिष्णुता एवं धन–त्याग की प्रेरक घटना के लेखन के लिये डॉ. अनेकान्त कुमार जैन को आभार।

स्मृतिशेष सौ. मंजरी जैन का आलेख – 'नारी की मर्यादा' यथार्थ के धरातल पर नारी स्वतंत्रता एवं समानता की दृष्टि से संतुलित और व्यावहारिक है। जैन संस्कृति में नारी को धार्मिक क्रियाओं को करने हेतु पुरुष के समान समानता के अधिकार है। प्रकृति प्रदत्त शरीर की विशिष्ट

संरचना के कारण नारी स्वतः अपने शील की रक्षा हेतु परम्परा से पर–पुरुष मूर्ति का स्पर्श आदि नहीं करती। यह भेद–भाव का सूचक नहीं है। डॉ. शशि कान्त जी ने सौ. मंजरी जैन स्मृतिका के रूप में जो भाव व्यक्त किये हैं, वे विछोह की पीड़ा को मर्यादित रूप से दर्शाते हैं। हम भी उनके प्रति भावपूर्ण सम्वेदना व्यक्त करते हैं। प्रकृति की घटनाओं को यथार्थ के धरातल पर समझना/अनुभूत कर संतुलन बनाये रखना भी जीवन की कला है। परिवार के सदस्यों ने कविता रूप में अपना अभाव व्यक्त किया, वह उचित ही है। स्मृतिशेष भाभी जी को विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित है।

डॉ. समणी शशि प्रज्ञा का आलेख **'Psycho-healing Preksha therapy of forgiveness'** आध्यात्मिकता और तनाव मुक्ति के लिये उपयोगी और मार्गदर्शक है। लेखिका ने जीसस क्राइस्ट के क्षमाभाव का उल्लेख कर आत्म स्वभाव की प्राप्ति हेतु क्षमाशीलता, सहनशीलता, धैर्य आदि का उल्लेख किया है। इसका हिन्दी अनुवाद अपेक्षित है।

डॉ. अनेकान्त कुमार जैन का यात्रा संसमरण जिसमें उन्होंने सरहिन्द के टोडरमल की धार्मिक सहिष्णुता/उदारता का परिचय दिया है, को पढ़कर मन प्रमुदित हुआ। हमारे पूर्वजों की उदारता, बलिदान व धार्मिक सहिष्णुता ज्ञात कर समाज गौरवान्वित होता है। भामाशाह ने भी महाराणा प्रताप को संकट के समय आर्थिक सहयोग देकर ऐसा ही श्रेष्ठ उदाहरण राष्ट्र की रक्षा के लिए प्रस्तुत किया था। ऐसे अन्य प्रकरण भी जिनमें अजैनों ने जैनों की सहायता की हो या जैनों ने अजैनों की सहायता की हो, प्रकाशित किये जाने चाहिए।

अंक 85 पर पाठकों के मत प्राप्त न होने से उत्पन्न सम्पादकीय उदासी यथार्थ और प्रेरक है।

अंत में, स्मृतिशेष, सम्माननीया भाभी श्रीमती मंजरी जैन के प्रति अपनी भावांजली अर्पित करता हुआ उनकी आत्मा की शांति एवं सद्गति हेतु हार्दिक भावना व्यक्त करता हूं।

कालेज कॉलोनी, एम.सी.डी, वार्ड नं 1/268, बुढार–484110
(जि. शहडोल, म.प्र.)

✧✧✧

अभिनन्दन

5 सितम्बर, 2018, को बागपत की **श्रीमती चित्ररेखा जैन** को राज्य अध्यापक पुरस्कार प्रदान किया गया।

21 अक्टूबर को जैन मिलन, लखनऊ, द्वारा नेपालगंज (नेपाल) के **श्री संजय कुमार जैन** को **विश्व मैत्री सेवा सम्मान–2018** प्रदान किया गया। उससे पहले 29 जुलाई को **श्री संजय जैन** को **मिलन उपलब्धि सेवा सम्मान–2018** प्रदान किया गया।

22 नवम्बर को **डॉ. शशि कान्त जैन** को **पेन्शनर्स शिरोमणि** सम्मान से विभूषित किया गया।

2 दिसम्बर को कुन्द–कुन्द भारती, नई दिल्ली में अहिंसा इण्टरनेशनल द्वारा अपने 45वें स्थापना दिवस पर **डॉ. अनेकान्त कुमार जैन** को पत्रकारिता पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

प्रो. नलिन के शास्त्री, कुल सचिव, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया को श्रुत सेवा निधि न्यास, फिरोजाबाद, के "अक्षराभिषेक" कार्यक्रम में **श्रुत सेवा अलंकरण** से सम्मानित किया गया। प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन के निधन के पश्चात् उनकी पहली अनुपस्थिति में यह आयोजन सम्पन्न हुआ।

मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर में जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग के सहायक आचार्य **डॉ. सुमत जैन** का प्राकृत भाषा के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए, **महर्षि बादरायण राष्ट्रपति पुरस्कार 2017** के लिए चयन किया गया है।

इन्दौर में **श्रीमती समता जैन** को देवी अहिल्या विश्वविद्यालय द्वारा "समकालीन प्रमुख साध्वियों की परम्परा में गणिनी ज्ञानमती जी का साहित्य" विषय पर शोध–प्रबन्ध के लिए पी–एच.डी. की उपाधि प्रदान की गयी।

श्री अर्नव नाहर जैन ने चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट की परीक्षा उत्तीर्ण की। वह श्री लूनकरण नाहर जैन के पौत्र और श्री विजय नाहर जैन के सुपुत्र हैं।

शोधादर्श **का समस्त परिवार और** ***तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति*** **उपरोक्त सभी महानुभावों का उनकी यश–वृद्धि के लिए हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।**

✧✧✧

शोक संवेदन

लखनऊ में 18 जुलाई को, 66–वर्षीय **श्री राकेश कुमार अग्रवाल** का असमय निधन हो गया।

फिरोजाबाद में 8 अगस्त को प्रसिद्ध विद्वान, 81–वर्षीय, **श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन** का शरीर शान्त हो गया। वह अक्षराभिषेक कार्यक्रम के संस्थापक थे।

दिल्ली में 18 अगस्त को सुप्रसिद्ध पत्रकार, 86–वर्षीय, **श्री श्रीकिशोर जैन** का शरीर शांत हो गया।

दिल्ली में 1 अक्टूबर को सुश्रावक, 62–वर्षीय, **श्री गिरीश गर्ग जैन** का निधन हो गया।

फिरोजाबाद में 1 दिसम्बर को श्री अनूपचन्द जैन, सम्पादक, **जैन संदेश** की धर्मपत्नी, 73–वर्षीया, **श्रीमती कमलेश जैन** का शरीर शांत हो गया। 57 वर्ष के दाम्पत्य जीवन का साथ छूट जाने पर अनूपचंद जी एकाकी हो गये। सुपुत्र राहुल और सुपुत्रियां संध्या और शालनी बड़ौदरा में सपरिवार व्यवस्थित हैं। श्री सुरेश जैन 'सरल' ने अपनी श्रद्धांजलि विशेष रूप से प्रस्तुत की।

लखनऊ में 12 दिसम्बर को धर्मनिष्ठ सुश्राविका, 83–वर्षीया **श्रीमती शारदा जैन** का शरीर शांत हो गया।

उपरोक्त सभी दिवंगत महानुभावों के प्रति *शोधादर्श* परिवार की भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित है और शोक से संतप्त परिवारों के प्रति हार्दिक संवेदना निवेदित है। ✧✧✧

समाचार विविधा

उत्तर प्रदेश के अनुपूरक बजट में 28 अगस्त को जैन विद्या शोध संस्थान के लिए रु. 25 लाख का प्रावधान किया गया।

श्री विपिन कुमार जैन सर्राफ, राष्ट्रीय महामंत्री, दिगम्बर जैन महासमिति, ने अपने पत्र दिनांक 4 सितम्बर 2018 द्वारा अवगत कराया है कि झारखंड सरकार ने 10 अगस्त को यह निर्णय लिया कि पारसनाथ पर्वत पर स्थानीय जनजाति के आराध्य मरांग बुरू का मन्दिर बनेगा और इसे पर्यटन क्षेत्र के रूप में विकसित किया जायेगा। पारसनाथ पर्वत जैन धर्मावलम्बियों का पावन पवित्र तीर्थक्षेत्र है। झारखण्ड सरकार का उक्त निर्णय The Places of Worship (Special Provision) Act, 1991 की धारा

3 व 4 के प्रावधानों का उल्लंघन करता है। झारखण्ड के राज्यपाल से निवेदन किया गया है कि **पारसनाथ पर्वत** पर किसी भी अन्य धर्मों के लोगों द्वारा किये जाने वाले निर्माण को रोका जाये और उस पर्वत पर किसी भी प्रकार की पर्यटन की गतिविधियों को संचालित करने की अनुमति न दी जाये।

प्राकृत जैन भास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली, में 16 नवम्बर को एंटीबाईटिक और स्वास्थ्य विषय पर डॉ. अरुण शाह, भारतीय बाल अकादमी, बिहार इकाई, का विशेष व्याख्यान आयोजित किया गया। इसमें यह बताया गया कि एंटीबाईटिक दवा का सेवन बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए। भारत सरकार का आदेश है कि सभी डॉक्टर पर्चे पर साफ–साफ एवं बड़े अक्षरों में दवा का नाम लिखे और यदि एंटीबाईटिक दवा लिखी जा रही है तो वह मरीज को बताएं कि वह किस बीमारी के लिए है।

17–18 नवम्बर को मेड़ता शहर में **राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी** का आयोजन किया गया जिसमें "युवा पीढ़ी – दशा और दिशा" विषय पर विचार–विमर्श किया गया। संगोष्ठी संयोजक प्रो. धर्मचन्द जैन, जोधपुर, ने बताया कि संगोष्ठी को 24 विद्वानों एवं चार संत प्रवरों ने सम्बोधित किया। संगोष्ठी का आयोजन सम्यग् ज्ञान प्रचारक मण्डल (जयपुर), अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद (जोधपुर) एवं श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ (मेड़ता शहर) के संयुक्त तत्वावधान में हुआ।

अखिल भारतवर्षीय **दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद की कार्यकारिणी** की बैठक 26–27 नवम्बर को रतलाम में डॉ. श्रेयांस कुमार जैन (बड़ौत) की अध्यक्षता में हुई। इसमें यह प्रस्ताव भी पारित किया गया कि मुनि–आर्यिका आदि की प्रतिमा का निर्माण नहीं होना चाहिए; गुरु–मन्दिर व आर्यिका मन्दिर की परम्परा आगमोक्त नहीं है।

दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र सांवलिया पार्श्वनाथ करगुवां जी, झांसी, में **उत्तरांचल दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी** की 23 से 25 दिसम्बर को बैठक सम्पन्न हुई। अल्प संख्यक आयोग के सदस्य श्री मंजीत सिंह ने बताया कि मदरसा की तरह जैन धार्मिक पाठशालाओं के शिक्षकों को भी अनुदान दिये जाने की योजना है। यह भी विचार किया गया कि पत्रकारिता की विश्वसनीयता बनाई रखी जाये।

भ0 महावीर स्मारक समिति, वैशाली, की वार्षिक सभा में तीर्थंकर महावीर कीर्ति–स्तम्भ को भव्यता के साथ बनाने का निर्णय हुआ। बैठक कुन्द–कुन्द भारती, नई दिल्ली, में सम्पन्न हुई और उसकी अध्यक्षता श्री राज कुमार जैन (वीरा बिल्डर्स) ने की।

✧ ✧ ✧

डॉ. शशि कान्त जैन को *पेन्शनर्स शिरोमणि* सम्मान

उत्तर प्रदेश सचिवालय पेन्शनर्स वेल्फेयर एसोसियेशन के 22 नवम्बर 2018 को सम्पन्न वार्षिक अधिवेशन में **पेंशनर्स शिरोमणि** की उपाधि से **डॉ. शशि कान्त जैन** को सम्मानित किया गया। डॉ. जैन उत्तर प्रदेश सचिवालय में 1 अप्रैल 1953 से 30 जून 1990 तक सेवारत रहे थे। पूर्व मुख्य सचिव श्री अतुल कुमार गुप्ता विशिष्ट अतिथि थे। अपना आभार व्यक्त करते हुए डॉ. जैन ने कहा कि उनके लिए यह विशेष सौभाग्य की बात है कि उनके साथियों द्वारा उन्हें याद किया गया और स्नेह पूर्वक सम्मानित किया गया। जिस गर्मजोशी के साथ उनका अभिनन्दन किया गया वह उनके स्मृति पटल पर बराबर अंकित रहेगा। एसोसियेशन के संरक्षक श्री श्याम सुन्दर अग्निहोत्री, अध्यक्ष श्री पी.के. शर्मा, सचिव श्री एन. पी. त्रिपाठी और कार्यकारिणी सदस्य श्री वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव को डॉ. जैन ने विशेष रूप से धन्यवाद दिया।

श्री वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव ने **डॉ. जैन का परिचय** निम्नवत प्रस्तुत किया–

यू.पी. पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा 1952 में ली गयी प्रतियोगात्मक परीक्षा के आधार पर डॉ. शशि कान्त जैन ने 1 अप्रैल 1953 को उत्तर प्रदेश सचिवालय में सेवा प्रारम्भ की। 1954 में कमीशन द्वारा अपर डिवीजन एसिस्टेंट्स की नियुक्ति के लिए ली गई प्रतियोगात्मक परीक्षा में उन्होंने प्रथम स्थान प्राप्त किया। 30 जून 1990 को वे उत्तर प्रदेश शासन में विशेष सचिव के पद से सेवानिवृत्त हुए। वह जन–जाति कल्याण के निदेशक और तराई अनुसूचित जनजाति निगम के मैनेजिंग डायरेक्टर भी रहे।

डॉ. जैन का शैक्षणिक वृत्त उत्कृष्ट रहा था। लखनऊ विश्वविद्यालय में आचार्य नरेन्द्रदेव, कुलपति, ने 1949 में हिन्दी माध्यम भी चालू किया था जो स्वतंत्रता प्राप्ति की भावना का लक्षण था। कुछ छात्रों के साथ डॉ. जैन ने बी.ए. में हिन्दी माध्यम को अपनाया था। बी.ए. आनर्स (इतिहास) में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर उन्हें 1952 में **सर श्रीनिवास वर्दाचारियर स्वर्ण पदक** से सम्मानित किया गया था और **डॉ. राधा कुमुद मुखर्जी एन्डाउमेंट स्कॉलरशिप** भी एम.ए. में प्रदान की गई थी। 1953 में उन्होंने

इतिहास विषय में एम.ए. प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया तथा रूसी भाषा में डिप्लोमा डिस्टिंक्शन के साथ उत्तीर्ण किया।

1965 में सचिवालय सेवा में कार्यरत कर्मचारियों को उच्चतर अध्ययन करने की अनुमति प्रदान की गई थी। सचिवालय सेवा के जिन पांच कर्मचारियों ने पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की उनमें डॉ. हर्ष नारायण, डॉ. नासिर अली खां, डॉ. वली–उल्–हक अंसारी, डॉ. ज्ञानेन्द्र निगम और डॉ. जैन सम्मिलित थे। केवल डॉ. खां और डॉ. जैन ही सचिवालय की सेवा में रहे, अन्य तीन अध्यापन कार्य हेतु विभिन्न विश्वविद्यालयों में चले गये। डॉ. जैन को पी–एच.डी. की उपाधि 1969 में लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की गई और उनके शोध–प्रबन्ध को अति–उत्कृष्ट स्वीकार कर विश्वविद्यालय एक्ज़ीक्यूटिव काउंसिल द्वारा अपवाद स्वरूप उन्हें मौखिक परीक्षा से अवमुक्त किया गया।

उ.प्र. शासन द्वारा उत्कृष्ट कार्य के लिए राज्य कर्मचारियों को सम्मानित करने के लिए शासन द्वारा एक कार्यक्रम बनाया गया था। प्रथम बैच में 2 अक्टूबर 1972 को 18 राज्य कर्मचारियों को मुख्य मंत्री पं. कमलापति त्रिपाठी ने सम्मानित किया था। जिन 5 अधिकारियों को सरकारी कार्य के अतिरिक्त उत्कृष्ट बौद्धिक कार्य के लिए सम्मानित किया गया था उनमें श्री अशोक कुमार मुस्तफी आई.ए.एस., श्री के एन. दारूवाला आई पी.एस., श्री श्रीलाल शुक्ल पी.सी.एस., श्री शिवशंकर मिश्र सूचना अधिकारी, और सचिवालय सेवा अधिकारी के रूप में डॉ. जैन सम्मिलित थे।

1974 में श्री गुलाम हुसैन आई.ए.एस. की अध्यक्षता में और कु. कुसुमलता मित्तल आई.ए.एस. तथा श्री एस.बी. माथुर (सदस्य, यू.पी. पब्लिक सर्विस कमीशन) की सदस्यता के साथ गठित समिति द्वारा डॉ. जैन को अनुभाग अधिकारी के पदों पर नियुक्ति के लिए 'ए' श्रेणी में चयनित किया गया।

डॉ. जैन ने नवम्बर 1963 से सितम्बर 1971 तक सहायक अधीक्षक के सुपरवाइजरी पद पर, 1 अक्टूबर 1971 से 5 मार्च 1981 तक अनुभाग अधिकारी के पद पर, 6 मार्च 1981 से 15 अप्रैल 1984 तक अनु–सचिव के पद पर, 16 अप्रैल 1984 से 4 जनवरी 1987 तक उप–सचिव के पद पर, 5 जनवरी 1987 से 31 जुलाई 1989 तक संयुक्त–सचिव के पद पर, और

1 अगस्त 1989 से 30 जून 1990 तक विशेष–सचिव के पद पर कार्य किया।

सचिवालय सेवा अधिकारियों के लिए **विशेष सचिव** के पद के सृजन में डॉ. जैन की महत्वपूर्ण भूमिका रही। 1986 में वित्त विभाग में उप–सचिव के पद पर कार्य करते हुए वित्त सचिव डॉ. जनार्दन प्रसाद सिंह के सहयोग से विशेष सचिव का एक पद सृजित कराया जा सका और इस पद पर 1953 के बैच के श्री सुरेन्द्र चन्द्र जैन की नियुक्ति 1987 में हुई। श्री सुरेन्द्र चंद्र जैन के 31–12–1987 को सेवानिवृत्त होने पर उन्हीं के बैच के श्री सतीश चन्द्र श्रीवास्तव की 1 जनवरी 1988 को नियुक्ति की गई। श्री श्रीवास्तव को नियमों का अन्देखा करके 31–12–1988 को सेवा–निवृत्ति के बाद सेवा–विस्तार दे दिया गया जिससे डॉ. जैन की पदोन्नति में बाधा उपस्थित हुई। 1954 के बैच के डॉ. जैन पात्रता क्रम में वरिष्ठतम थे। काफी संघर्ष के बाद मुख्य सचिव श्री शिरोमणि शर्मा के सहयोग और समर्थन से डॉ. जैन को विशेष सचिव के पद पर 1–8–1989 से पदोन्नति प्राप्त हो सकी।

जनवरी 1990 में डॉ. जैन को "उत्तर प्रदेश सचिवालय सेवा अधिकारी संघ" का अध्यक्ष सर्व सम्मति से निर्वाचित किया गया। अपने संवर्ग में वह वरिष्ठतम थे। डॉ. जैन के प्रस्ताव पर यह भी निश्चय किया गया कि आई.ए.एस. एसोसियेशन की तरह इस संस्था में भी संवर्ग के वरिष्ठतम सदस्य को अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित किया जाये। सेवानिवृत्ति के दिन ही डॉ. जैन ने अपना पदभार संघ के सचिव को सौंप दिया था।

सेवानिवृत्ति से एक सप्ताह पहले 23 जून 1990 को डॉ. जैन ने "उत्तर प्रदेश सचिवालय सेवा अधिकारी संघ" के तत्वावधान में 1980 तक सेवानिवृत्त हो गये सचिवालय सेवा के 63 अधिकारियों का सम्मान समारोह भी आयोजित किया था। इस प्रकार का आयोजन उत्तर प्रदेश सचिवालय के इतिहास में पहला था।

शासकीय सेवा की प्रवृत्तियों के साथ–साथ डॉ. जैन का शोध और लेखन कार्य चलता रहा। उनकी पुस्तक The Hathigumpha Inscription of Kharavela and the Bhabru Edict of Asoka – A Critical Study, 1971 में प्रकाशित हुयी और उसका दूसरा परिवर्धित संस्करण भी 2000 में प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक आस्ट्रेलिया की कैनबरा यूनीवर्सिटी में और भारत में

मगध यूनीवर्सिटी के पाठ्यक्रम में सम्मिलित की गई। पी–एच.डी. के शोध–प्रबन्ध Political and Cultural History of Mid-North India के प्रकाशन का अनुमोदन इण्डियन हिस्टॉरिकल रिसर्च सोसायटी द्वारा किया गया और यह 1987 में प्रकाशित हुआ।

डॉ. जैन का शोधपरक लेखन का कार्य 1952 में प्रारम्भ हुआ था और अभी भी प्रवाहमान है। 13 सितम्बर 2000 को पानीपत में पद्मश्री डॉ. लक्ष्मी नारायण दुबे की अध्यक्षता में आयोजित भव्य समारोह में हिन्दी भाषा/समाज की अमूल्य सेवा के उपलक्ष में डॉ. जैन को '**बीसवीं शताब्दी रत्न**' सम्मान से जैमिनी अकादमी द्वारा सम्मानित किया गया। अमेरिकन बायोग्रेफिकल इन्स्टीट्यूट द्वारा 2003 में और पुनः 2004 में Man of the Year की प्रतिष्ठा सूचक उपाधि के लिए डॉ. जैन को नामित किया गया। यह उपाधि विश्व भर से उन व्यक्तियों की पहचान कर जिनका कृतित्व, उपलब्धियां और विशिष्ट लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रतिबद्धता उत्कृष्ट समझे जाते हैं, सम्मान सूचनार्थ प्रतिवर्ष प्रदान की जाती है। एस्ट्रॉलाजिकल रिसर्च प्रोजेक्ट, कोलकाता, द्वारा 29वीं इंटरनेशनल एस्ट्रॉलाजी एण्ड ओरियन्टल हेरिटेज कान्फ्रेंस में 2006 में उन्हें **महर्षि वेदव्यास सम्मान** प्रदान किया गया।

सम्प्रति डॉ. जैन शोध पत्रिका **शोधादर्श** के मार्गदर्शक हैं और **Frown**/संतर्जन के लेखक–सम्पादक हैं। स्वतंत्र चिन्तन युक्त और शोधपरक उनकी लेखनी कदाग्रह निरपेक्ष और तथ्य सापेक्ष विधा में विविध विषयों पर चलती रहती है।

557/45, प्रेम कुटी, ओम नगर, आलमबाग, लखनऊ–5

✧✧✧

पाठकों के पत्र

श्री अजित जैन 'जलज', टीकमगढ़

अंक 85 पूरा पढ़ा, सुना। इतिहास पुरुषों का पूरा इतिहास एक अंक में संजोने का आपका प्रयास उत्कृष्ट रहा।

विरली विचारधारा की विरासत को संजोने वाले आप जैसे विद्वान दुर्लभ हैं। उस पर पीढ़ी–दर–पीढ़ी संस्थागत जैनत्व जागरण के कार्य अद्‌भुत हैं। आपको अभी अनेक मील के पत्थर गाड़ने हैं।

डॉ. परमानन्द जड़िया, लखनऊ

शोधादर्श 86 की प्रति श्री सुरेश कुमार 'आवारा नवीन' के माध्यम से प्राप्त हुई। धन्यवाद! मुख–पृष्ठ सुन्दर तथा आकर्षक है। आपकी पत्नी श्रीमती मंजरी जैन सौभाग्य शालिनी महिला थीं। वे अपने पीछे भरा–पुरा सुसंस्कृत परिवार छोड़कर अपनी इच्छानुसार आपके सामने परमधाम को चली गयीं। उनके परिजनों ने उनके प्रति जो शोकोद्‌गार प्रकट किये हैं वे उनके व्यक्तित्व के अनुरूप ही हैं। ऐसा सौभाग्य बहुत कम लोगों को प्राप्त हो पाता है। उनके सब परिजन उच्च शिक्षा प्राप्त हैं और सुखी जीवन जी रहे हैं, इसे मैं भगवान की कृपा ही मानता हूं। भले ही कोई ईश्वरीय सत्ता में विश्वास न करता हो।

मंजरी जी विदुषी भी थीं परन्तु उन्होंने वैदिक सभ्यता में नारी को हीन अवस्था में बताया और बौद्ध तथा जैन सम्प्रदाय में उनकी स्थिति बेहतर बतायी है, इससे मैं सहमत नहीं हूं। केवल इतना ही कहना चाहूंगा कि आर्य–सभ्यता में लीलावती, गार्गी, अरुन्धती, अनुसूइया, सावित्री जैसी महिलाओं ने शीर्ष स्थान प्राप्त किया है। सनातन धर्म को मानने वाले सीता, राधा, शारदा, लक्ष्मी, दुर्गा, काली, उमा भवानी को पूर्ण श्रद्धा के साथ पूजते–उपासते हैं। हिन्दुओं का कोई मन्दिर ऐसा नहीं है जहां केवल पुरुष–प्रतिमा की पूजा होती हो। भगवान शिव अर्द्धनारीश्वर हैं। सीता–राम तथा राधा–कृष्ण की पूजा साथ–साथ होती है। बुद्ध मन्दिरों में तो केवल बुद्ध की प्रतिमा है। जैन मन्दिरों में भी केवल तीर्थंकर की पूजा होती है।

हिन्दू धर्म में बहुत सा पाखण्ड आ गया था। उसके विरुद्ध सुधारवादी आन्दोलन चले। बाल–विवाह पर प्रतिबन्ध लगा। सती प्रथा पर

रोक लगी। बलि प्रथा कहीं–कहीं अभी भी है। वृद्ध–विवाह और बहु–विवाह अब नहीं होते। पंडा पुजारियों का वर्चस्व शनैः शनैः समाप्त हो रहा है। परन्तु नास्तिक्ता भी बढ़ रही है। माता–पिता की सेवा अब नहीं होती। संस्कार ढीले पड़ते जा रहे हैं। यह अच्छा लक्षण नहीं है।

श्री बी.डी. अग्रवाल, लखनऊ

शोधादर्श 85 में विगत तीन विद्वान सम्पादकों तथा अन्य लेखकों के लेख खोजपूर्ण व ज्ञानवर्धक हैं। पत्रिका का प्रबन्ध प्रशंसनीय है।

सौ. मंजरी जैन की विवाह के समय आयु केवल 15 वर्ष थी। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने ससुराल में रहकर ही योग्यता प्राप्त की। उसके बाद 80 वर्ष की आयु तक समस्त परिवार को योग्य व प्रगतिशील बनाया। यह एक अत्यंत प्रशंसनीय कार्य है। उनके सम्बन्ध में कई उद्‌गार पढ़कर मेरी आंखों में आंसू आ गये। उनसे आपके विछोह के लिये मेरी संवेदना है।

आपके मार्गदर्शन में पत्रिका का स्तर ऊंचा हो रहा है। आपको व सम्पादक मंडल के सदस्यों को उनके परिश्रम के लिये बधाई!

डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', दमोह

'शोधादर्श' की 86वीं किरण अपनी पूर्व–प्रकाशन–परम्परा का उत्कृष्ट निदर्शन – गुणवत्तायुक्त प्रखर चिन्तन प्रशस्त सम्पादन–मर्मज्ञता और सम–सामयिक विधाओं का सम्पुट है। यह श्रद्धेय डॉ0 ज्योति प्रसाद जी के द्वारा सुरोपित, सम्वर्द्धित, विशाल वटवृक्ष है। इसमें प्रकाशित सामग्री पठनीय और संग्रहणीय है। प्रत्युत्पन्न सम्वेत आप सभी के नैष्ठिक आदर्शों और समर्पण को कोटिशः बधाइयां एवं शुभ कामनाएं!

वैद्य' राजेश चन्द्र जैन, अलीगंज, (जि.एटा)

शोधादर्श का अंक 85 युग–पुरुष–त्रयी स्मृति विशेषांक प्राप्त हुआ। इसे पढ़कर ऐसा प्रतीत हुआ कि पत्रिका का स्तर काफी ऊंचा है और सदैव होता रहेगा ऐसा मेरा विश्वास है। सभी रचनायें व लेख, ज्ञानवर्द्धक एवं उच्च स्तरीय हैं। पृष्ठ 110 पर "समाज सुधार में धर्म गुरुओं की महत्वपूर्ण भूमिका हो", यह लेख दिल को छू गया। साथ ही पृष्ठ 112

पर "कुत्ते भौंकते रहे, कारवां चलता गया" – इस लेख की जितनी प्रशंसा की जाए वह अल्प ही होगी। दिगम्बर जैन साधुओं की गिरती स्थिति व उनकी चरित्रहीनता के बारे में पढ़कर ऐसा लगा कि ऐसे भ्रष्ट नग्न दिगम्बर जैन साधुओं को जेल के सींखचों में डाल दें जैसे कि संत आशाराम बापू, संत रामपाल, राम–रहीम, हनीप्रीत आदि जेल में बन्द हैं। ऐसा करने से जो नये साधु बन रहे हैं, उनमें कमी आयेगी। यदि मुनि–भक्त जैन श्रावक व जैन विद्वान भ्रष्ट जैन मुनियों का बचाव करते रहेंगे तो वह दिन दूर नहीं जब जैन धर्म का अपमान होता रहेगा। अभी अगस्त 2018 के प्रथम सप्ताह में इंडिया टी.वी. पर मुनि नयनसागर महाराज की बदनामी जैन–अजैन बंधुओं ने देखी थी।

सौ. रंजना बंसल, बुढ़ार

शोधादर्श 85 को पढ़ते हुये मुझे मेरे पूज्य बाबाजी स्व. श्रीमान खेमचंद चौधरी का स्मरण हो आया।

मालचौध निवासी बाबा जी अनाथ और इकलौती संतान थे। उन्हें मिश्रा जी नाम के ब्राह्मण भिक्षुक ने दयाद्र होकर नयापुर लाकर भिक्षावृत्ति से पाला पोसा, शिक्षित किया, जिसके फलस्वरूप ब्रिटिश राज्य में नागपुर में वह पी.डब्लू.डी. विभाग में ओवरसियर नियुक्त हुए। बाबाजी ने मिश्रा जी की मनोयोग पूर्वक पितृवत सेवा की। बाबाजी स्वभाव से उदार और परोपकारी थे। वह बुंदेलखण्ड के पिछड़ेपन से अच्छी तरह परिचित थे। उन्होंने अपने साधनों का उपयोग करते हुए सागर के आसपास के गांवों (चितौरा, खमकुंआ, केसली) के परिवारों को नागपुर बुलाया और उन्हें व्यवसाय कराने मे सहयोग दिया। समाज में उनकी उदारता का विस्तार हुआ, जिसके फलस्वरूप नागपुर में बुंदेलखण्ड के सैकड़ों जैन परिवार (परबार समाज के) बस गए जो आज समृद्धि के शिखर पर हैं। एक दीप से अनेक दीप जल गए। ऐसे पूज्य मिश्राजी व बाबाजी को सादर नमन। सन 1947 में अप्रैल माह में बाबाजी का निधन हुआ। विचार करती हूं कि यदि भिक्षुक मिश्राजी ने बाबाजी का पालन–पोषण न किया होता तो उक्त सम्पन्नता की स्थिति निर्मित नहीं होती। श्री मिश्राजी को पुनः नमन।

श्री सुरेश जैन (IAS), भोपाल

शोधादर्श–86 प्राप्त कर हार्दिक प्रसन्नता हुई। आज अनंत चतुर्दशी के दिन प्रातः तीन बजे उठकर एक ही बैठक में इसे पढ़ गया। आदरणीया मंजरी जैन का आलेख "नारी की मर्यादा" केवल नारी के लिए ही नहीं अपितु पूरे समाज के लिए पठनीय और आचरणीय है। नारी की उदारता, समान भागीदारी और समन्वयात्मकता से प्रत्येक पुरूष और महिला तथा प्रत्येक युगल का चतुर्मुखी विकास संभव हो पाता है। श्रद्धेय शशि कांत जी की मंजरी जी के प्रति स्मृतिका में उल्लिखित मार्गदर्शक बिन्दु हम सभी के लिए प्रेरणा के स्रोत हैं। उनके परिवार के सुयोग्य सदस्यों द्वारा इस स्वर्गस्थ आत्मा के प्रति हिन्दी गद्य और पद्य में अभिव्यक्त श्रद्धांजलियां हमें पवित्र भावनाओं से ओत–प्रोत कर देती है। कुछ विलम्ब से ही सही उनको श्रद्धांजलियां तथा उनके पीछे छूट गए साथी को विनम्र संवेदनायें समर्पित हैं।

इस अंक में प्रकाशित पूज्य गणेश प्रसाद वर्णी पर केन्द्रित श्रद्धेय रमा कान्त जी का आलेख वर्णी जी के अवसान के छह दशक बाद भी वर्णी जी के अवदान को जीवन्त कर देता है। वे हमारे गुरूणां गुरू रहे हैं और उन्होंने हमारे जन्म स्थल जैन तीर्थ नैनागिरि तथा नैनागिरि में स्थित पाठशाला को अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक पोषित और विकसित किया। वर्णी जी वर्तमान आचार्यों और मुनिवरों के लिए जैन शैक्षणिक जगत के प्रकाश स्तम्भ हैं।

इसी अंक में आपने हमारा आलेख "बाबा दौलतराम वर्णी नैनागिरि की रचनायें" तथा प्रो. वीरसागर जैन, नई दिल्ली, का आलेख "दौलतराम जी की अज्ञात कृति का जीर्णोद्धार" प्रकाशित किया है। आपके द्वारा प्रदत्त प्रोत्साहन के लिए हम अनुगृहीत हैं।

✧✧✧

पेंशनर्स शिरोमणि सम्मान

डॉ. जैन द्वारा धन्यवाद ज्ञापन
मंचस्थ – श्री श्याम सुन्दर अग्निहोत्री,
श्री महेश कुमार गुप्ता और श्री अतुल कुमार गुप्ता

डॉ. जैन और श्री दिवाकर त्रिपाठी (पूर्व सचिव, सूचना विभाग, उ.प्र.)

आवश्यक सूचना

वार्षिक शुल्क रु. 60/–(साठ रुपये), **'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.,ज्योति निकुंज,चारबाग, लखनऊ–226004'**, को 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' के नाम लखनऊ में देय चेक अथवा ड्राफ्ट द्वारा भेजने का अनुग्रह करें। मनीआर्डर से भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्टकार्ड पर भी अपने पूरे नाम व पते के साथ अवश्य भेजें। विदेशों के लिए पत्रिका का वार्षिक शुल्क 25 डालर है।

शोधादर्श षड्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक जून–अन्त और दिसम्बर–अन्त में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहियें। यथासम्भव लेख 3–4 टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। लेख सामान्यतया हिन्दी में होने चाहियें परन्तु अंग्रेजी में भी भेजे जा सकते हैं। लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु **शोधादर्श** का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को **ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–226004,** के पते पर भेजे जायें।

प्रत्यावर्तन में पत्रिका की केवल एक प्रति सम्पादक को उपरोक्त पते पर भेजी जाये।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेख में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

– **सम्पादक**